पाक्षिक

मूल्य ₹ २५

पाथेय कण

कार्तिक कृ.३ युगाब्द ५१२१ वि.२०७६, १६ अक्तूबर , २०१९

जम्मू-कश्मीर विशेषांक

मार्तण्ड मंदिर

शिवखोड़ी

शंकराचार्य मंदिर

बाबा अमरनाथ

माता वैष्णो देवी

क्षीर भवानी मंदिर

सभी पाठकों को दीपावली की हार्दिक शुभकामनायें

विज्ञापन

विज्ञापन

विज्ञापन

।। ॐ संभूत्या अमृतमश्नुते ।।
संगठन से ही अमरत्व की प्राप्ति होती है।।

मातृभूमि की धर्मध्वजा का अभिनंदन वंदन ।
राष्ट्र देवता के चरणों में पावन शब्द नमन ।।

जम्मू-कश्मीर विशेषांक

पाक्षिक
पाथेय कण

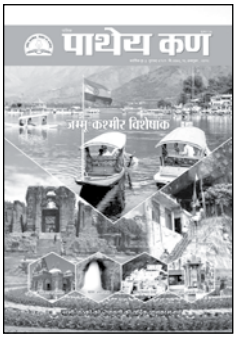

कार्तिक कृष्ण ३

युगाब्द ५१२१, वि.२०७६

१६ अक्तूबर २०१९ (संयुक्तांक)

वर्ष ३५ ■ अंक १४

सहयोग राशि

एक वर्ष-₹ १५०/-
पन्द्रह वर्ष-₹१०००/-

प्रकाशक
'पाथेय भवन' 4, मालवीय संस्थानिक क्षेत्र, अग्रसेन मार्ग, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.)
सम्पर्क : 7976582011
9414447123, 9929722111,

इस अंक में कहाँ क्या

१२ **कश्मीर के महापुरुष** *केदार चतुर्वेदी*

१७ **कश्मीर की अमर संस्कृत परम्परा** *शास्त्री कौसलेन्द्र दास*

२८ **कश्मीर का कड़वा सच** *मेहरचन्द महाजन*

३३ **कश्मीर समस्या की पृष्ठभूमि** *कन्हैयालाल चतुर्वेदी*

४४ **कश्मीर का छल युक्त परिसीमन** *मेघराज खत्री*

४७ **पंडितों के पलायन की रोमहर्षक गाथा** *गोपाल शर्मा*

५० **एक नया इतिहास रचा गया** *डा.पुरुषोत्तम चतुर्वेदी*

५४ **अभी तो शीश कुचलना है** (कविता) *बलवीर सिंह 'करुण'*

७.	*इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि*	– नरेन्द्र सहगल
२१.	*कश्मीर का इस्लामीकरण*	– सतीश पेडणेकर
२५.	*कश्मीर का भूगोल*	– मेघराज खत्री
३७.	*अपना कश्मीर-अपनी भूल*	– डा.सम्पूर्णानन्द
४०.	*राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कश्मीर*	– छगनलाल बोहरा
५५.	*उत्कृष्ट शिक्षा का केन्द्र कश्यपपुर*	– सपना वर्मा
५९.	*जम्मू-कश्मीर के तीर्थ स्थल*	– डा.शुचि चौहान

६३ सरसंघचालक जी का विजयादशमी उद्बोधन

सलाहकार सम्पादक
कन्हैया लाल चतुर्वेदी

E-mail: patheykan@gmail.com
Web: www.patheykan.in

सम्पादक
मेघराज खत्री

सम्पादक मण्डल
मनोज गर्ग, केदार चतुर्वेदी

पृष्ठ संयोजन
कौशल रावत

व्यवस्थापक
धीरेन्द्र शर्मा

प्रबंध सम्पादक
माणकचन्द

सहायक
ओमप्रकाश

स्वत्वाधिकारी पाथेय कण संस्थान के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक माणकचन्द द्वारा कुमार एण्ड कम्पनी,ए-१०-२२ गोदाम औद्योगिक क्षेत्र, जयपुर से मुद्रित

सभी पाठकों को दीपोत्सव के पावन पर्व की हार्दिक शुभकामनायें

विज्ञापन

इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि

ऋषि कश्यप के कश्मीर में अनेक गौरव-गाथायें लिखी गईं

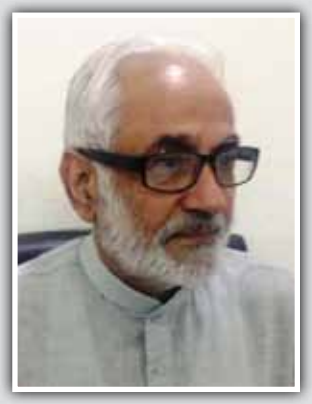

नरेन्द्र सहगल
वरिष्ठ पत्रकार तथा लेखक

पिछले अनेक वर्षों से मजहबी कट्टरपन, भारत विरोध और हिंसक जिहाद के संस्कारों में पल कर बड़ी हुई कश्मीर घाटी की युवा पीढ़ी को भारत की मुख्य राष्ट्रीय धारा में लाना वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती है। इसके लिए कश्मीर के उज्ज्वल अतीत का इतिहास पढ़ाया जाना अति आवश्यक है। तभी युवा कश्मीरियों को सनातन (वास्तविक) कश्मीरियत का ज्ञान होगा और वे हिंसक जिहाद के अमानवीय मकड़जाल से बाहर निकलकर अपने गौरवशाली अतीत से जुड़ सकेंगे।

नीलमत पुराण में स्पष्ट वर्णन मिलता है कि भारत का प्राय: सारा क्षेत्र एक भयानक जलप्रलय के परिणाम स्वरूप पानी से भर गया था। कालान्तर में भारत के सभी क्षेत्र पानी निकल जाने के कारण जीवन-यापन के योग्य हो गए, परंतु भारत के उत्तर में हिमालय की गोद में एक विशाल क्षेत्र अभी भी जलमग्न ही था। इस अथाह जल ने एक बहुत बड़ी झील का आकार ले लिया।

कश्यप ऋषि ने बसाया

कुछ समय पश्चात इस झील में ज्वालामुखी फटने जैसी क्रिया हुई। झील के किनारे वाली पर्वतीय चोटियों में अनेक दरारें पड़ने से सारा पानी बाहर निकल गया और एक सुंदर स्थान उभर कर सामने आया। यह स्थान (देश) अग्नि की शक्ति (ज्वालामुखी) से बना था। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार अग्नि की शक्ति 'सती' है। इसलिए तत्कालीन भूमि विशेषज्ञों ने इस स्थान का नाम सतीदेश (वर्तमान कश्मीर) रख दिया।

इसके पश्चात महर्षि कश्यप ने इस भू-खंड को लोगों के निवास योग्य बनाने का निश्चय करके अपने श्रमिक दल के साथ पर्वतों की कटाई तथा भूमि को समतल करने का काम प्रारंभ कर दिया। सारा कार्य सफलतापूर्वक संपन्न हो गया, परंतु पानी को स्थाई रूप से बहने का मार्ग देने के लिए एक नदी की आवश्यकता थी। कश्यप मुनि ने शिव-शंकर से सहायता मांगी।

शंकर ने तुरंत नदी बनाने के लिए विशेषज्ञों का दल भेजा। कश्यप मुनि ने खुदाई का शुभारम्भ करने के लिए शंकर से ही आग्रह किया। शंकर ने अपने त्रिशूल से धरती में चोट करके एक वितस्ति (बालिश्त) जितनी भूमि खोदकर खुदाई अभियान प्रारंभ कर दिया। अतः वितस्ति जितने स्थान से निकलने के कारण इस नदी का नाम 'वितस्ता' (वर्तमान झेलम नदी) पड़ गया।

इस नदी के प्रवाह ने रास्ते में आने वाले बड़े-बड़े पत्थरों को हटाकर, तोड़कर अपना मार्ग स्वयं बना लिया और अनेक क्षेत्रों की प्यास बुझाती हुई, भूमि को उपजाऊ बनाती हुई, सिंधु नदी में जा मिली। इसी सिंधु नदी के किनारे भारतीय संस्कृति विकसित हुई।

कश्मीर का प्रथम राजा नील

जब यह क्षेत्र पूरी तरह समतल हो

'' कश्मीर हिंदू विद्वानों की सबसे बड़ी पाठशाला है। दूरस्थ देशों के लोग यहां संस्कृत सीखने आते थे और उनमें से कई कश्मीर घाटी के सौंदर्य और जलवायु से चमत्कृत होकर यहीं के ही हो जाते थे।''

-अरबी यात्री अलबरूनी

गया, वितस्ता नदी के किनारे घाट इत्यादि तैयार हो गए, तब कश्यप मुनि ने भारत के अन्य क्षेत्रों से लोगों को यहां आकर बसने का विधिवत निमंत्रण भेजा। इस निमंत्रण को शिरोधार्य करके भारत के कोने-कोने से सभी वर्गों एवं जातियों के लोग यहां आकर बसने के लिए तैयार हो गए। उद्योगपति, कृषक, श्रमिक, वैद्य, गृह एवं मार्ग शिल्पी इत्यादि यहाँ आने शुरू हो गये।

योग्यतानुसार, नियमानुसार एवं क्रमानुसार कश्यप के ऋषि मण्डल ने सब को भूमि आवंटित कर दी। योग्य शिल्पियों ने नगर-ग्राम बसाए और देखते ही देखते सुंदर घर, मंदिर आदि बन गए।

नीलमत पुराण में कश्मीर के इतिहास, भूगोल, परम्पराओं और लोक-मान्यताओं आदि का वर्णन है।

सारा निर्माण कार्य संपन्न हो जाने के पश्चात अब प्रश्न खड़ा हुआ कि इस प्रदेश का शासन किसे सौंपा जाए। इस नए सती देश (कश्मीर) की जनता ने सर्वसम्मति से कश्यप मुनि के पुत्र नील को राजा घोषित कर दिया। इस प्रकार नील कश्मीर के प्रथम राजा हुए। उन्होंने बहुत ही कुशलता से शासन किया।

हिमालय की गोद में बसे इस प्रदेश के मनोरम सौंदर्य के समाचारों ने अनेक लोगों को यहां आकर बसने के लिए आकर्षित किया। भिन्न-भिन्न जातियों, मत-पंथों,क्षेत्रों के लोग यहां आकर रहने लगे। राजा नील ने सबका स्वागत किया। उन्हें अनेक प्रकार की सुविधाएं प्रदान की। चारों और शांति, भाईचारा, सहअस्तित्व और सामाजिक विकास का वातावरण था।

अनेक रिलीजनों का पोषण

सनातन कश्मीर घाटी में अनेक मत-पंथ जन्मे और फले-फूले। परंतु कभी भी अपना मत दूसरे पर थोपने की वृत्ति तथा आक्रामक मानसिकता नहीं पनपी। इन सभी मतों में परस्पर संघर्ष कभी नहीं हुआ। सर्वप्रथम कश्मीर में नीलमुनि द्वारा नागपूजा मत पर आधारित दर्शन का विकास हुआ। पूजा का यह मार्ग निर्बाध गति से चला। इसी के परिणामस्वरूप शैव रिलीजन का प्रादुर्भाव भी कश्मीर में हुआ।

सम्राट अशोक के समय बाईस सौ वर्ष पूर्व कश्मीर में बौद्ध मत का प्रवेश हुआ। अहिंसा, सुख, शांति इत्यादि बौद्ध सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार हुआ। अशोक के समय अनेक बौद्ध विहार, मठ-मंदिरों का निर्माण हुआ। कश्मीरी युवा बौद्ध भिक्षु बन कर विश्व के अनेक देशों में मानवता की प्यास बुझाने गए।

वास्तव में कश्मीर शैव रिलीजन और दर्शन का उद्गम स्थान है। शैवदर्शन कश्मीर की आत्मा है। कश्मीर की धरती पर जन्मे और विकसित हुए इस शैवदर्शन में मानव के संपूर्ण जीवन की कल्पना है तथा उसकी उन्नति का मार्ग है। शिव-शंकर के स्वरूप में घर-गृहस्थी, कृषि, गणतंत्र, योग, आत्मिक विकास, त्याग, शस्त्र विद्या और समन्वय जैसे विषय और क्षेत्र समा गए हैं।

भारत में पुरातन काल से ही काशी और कश्मीर शिक्षा के लिए विख्यात थे। परंतु कश्मीर आगे जा कर काशी से भी आगे निकल गया। काशी के विद्वानों को अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए कश्मीर आना पड़ता था।

शिक्षा का सर्वोच्च केंद्र

कश्मीरी विद्वान आनंद कौल अपनी पुस्तक 'द कश्मीरी पंडित' में लिखते हैं- *'' भारत में पुरातन काल से ही काशी और कश्मीर शिक्षा के लिए विख्यात थे। परंतु कश्मीर आगे जाकर काशी से भी आगे निकल गया। काशी के विद्वानों को अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए कश्मीर आना पड़ता था। आज भी काशी के लोग बच्चों को अक्षर-ज्ञान समारोह के समय पवित्र जनेऊ सहित कश्मीर दिशा की ओर सात पग चलने को कहते हैं।''* कश्मीर की भूमि भारतीय संस्कृति की उद्गमस्थली रही है। पूरे विश्व में फैली भारतीय जीवन-पद्धति के प्रचार-प्रसार में कश्मीर का विशेष योगदान है।

प्रसिद्ध विद्वान अलबरूनी जिसने सन् ११०२ ईस्वी में आक्रमणकारी क्रूर महमूद गजनवी के साथ उत्तर भारत का भ्रमण किया था, ने संस्मरणों में लिखा है- *'' कश्मीर हिंदू विद्वानों की सबसे बड़ी पाठशाला है। दूरस्थ देशों के लोग यहां संस्कृत सीखने आते थे और उनमें से कई कश्मीर घाटी के सौंदर्य और जलवायु से चमत्कृत होकर यहीं के ही हो जाते थे।''*

उल्लेखनीय है कि श्री गुरु नानक देव जी के पुत्र और उदासीन पंथ के संस्थापक बाबा श्रीचंद्र ने भी श्रीनगर के निकट एक बड़े संस्कृत महाविद्यालय में प्रशिक्षण प्राप्त किया था। मुगल शहज़ादा दाराशिकोह भी कश्मीर में संस्कृत का अध्ययन करने आया था।

गौरवशाली इतिहास

हम सभी भारतीयों को कश्मीर की गौरवमयी क्षात्र परंपरा और अजेय शक्ति पर

कश्मीर के शूरों ने महमूद गजनवी को धराशायी किया

कश्मीर के इतिहास का एक उज्ज्वल अध्याय यह भी है कि ईरान, तुर्किस्तान तथा भारत के कुछ हिस्सों को अपने पांव तले रोंदने वाला सुल्तान महमूद गज़नवी दो बार कश्मीर की धरती से पराजित होकर लौटा। कश्मीर में इस शौर्य को इतिहास के पन्नों पर लिखा गया महाराज संग्रामराज के शासनकाल में। इस शूरवीर राजा ने कश्मीर पर सन् १००३ ई. से सन् १०२८ तक राज किया। महमूद गज़नवी का अंतिम आक्रमण भारत पर १०३० ई. में हुआ था।

संग्रामराज और महमूद गज़नवी के दोनों युद्धों में काबुल गांधार राजवंश के सम्राट त्रिलोचन पाल ने बहादुरी से संग्रामराज का साथ दिया। त्रिलोचन पाल ने प्रबल मुस्लिम आक्रमणों को विफल करने में सफलता पाई थी। इसके बाद सन् ११२८ से सन् ११५० तक कश्मीर में राजा जयसिंह का राज रहा।

इस कालखण्ड में कश्मीर पर मुस्लिम सुल्तानों की कुदृष्टि पड़ चुकी थी। इसी समय में कश्मीर के एक अत्यंत निर्बल राजा हर्षदेव की कमजोर मानसिकता एवं अव्यवहारिक उदार नीतियों के दुष्परिणाम सामने आने लगे। कश्मीर की सेना और प्रशासन में पेशेवर मुस्लिम सैनिकों का प्रवेश बढ़ता चला गया।

कश्मीरी सम्राटों की इस सद्गुण विकृति ने कश्मीर की पारंपरिक एवं स्वाभाविक एकता को भंग करना प्रारंभ किया। कश्मीर की शक्ति घटनी शुरू हो गई। सहअस्तित्व की भावना में दरारें पड़ गई। आंतरिक संघर्षों की शुरुआत हो गई। मतान्तरण का जहर फैला और हिन्दू कश्मीर को मुस्लिम कश्मीर बनाने का मार्ग प्रशस्त होता चला गया।

उदारता, क्षमा आदि सद्गुण हैं किन्तु राष्ट्र के शत्रुओं के साथ उदारता का व्यवहार, उन्हें क्षमा कर देना, देशघाती रिलीजनों को प्रश्रय देना राष्ट्र के लिये घातक होते हैं। उस समय ये सद्गुण विकृति बन जाते हैं।

गर्व है। विश्व में मस्तक ऊंचा करके ज्ञात इतिहास के अनुसार चार हजार वर्षों तक स्वाभिमान पूर्वक स्वतंत्रता का भोग कश्मीर ने अपने बाहुबल पर किया है।

अनेक शताब्दियों तक इस वीरभूमि के रणबांकुरों ने विदेशों से आने वाली घोर रक्तपिपासु तथा जालिम कहलाने वाली जातियों और कबीलों के जबरदस्त हमलों को अपनी तलवारों से रोका है। इतिहास साक्षी है कि कश्मीर के प्रतापी सम्राटों ने मध्य एशिया तक हिन्दू संस्कृति का परचम फहराया था।

सनातन कश्मीर का विस्तृत इतिहास राजतरंगिणी ग्रंथ में मिलता है। यह सारा इतिहास महाभारत काल से प्रारम्भ होता है। इस दिग्विजयी कालखंड का प्रारंभ गोनंद नामक सम्राट के शासनकाल में हुआ था। पाण्डव वंश के राजाओं ने भी कश्मीर पर राज किया। संदीपन के समय कश्मीर राज्य की सीमाएं आज के गंधार (अफगानिस्तान) से कन्नौज तक फैली हुई थीं। इस कालखण्ड में पूरे भारत में एक ही प्रकार की राज्य व्यवस्था थी।

इतिहासकार कल्हण के अनुसार मगध के सम्राट अशोक (२५० ईसा पूर्व) ने कश्मीर को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया । अशोक ने ही श्रीनगरी (श्रीनगर) शहर को बसाया था । प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग, जो कश्मीर में कई वर्ष रहा था, ने लिखा है कि अशोक के राज्यकाल में पांच हजार बौद्ध भिक्षुओं को कश्मीर में बसाया गया था ।

सम्राट अशोक के बाद उसका पुत्र जलौक कश्मीर के सिंहासन पर बैठा । प्रतिदिन शिव की पूजा-अर्चना करने वाला राजा जलौक एक निडर एवं वीर शासक था। जलौक के नेतृत्व में कश्मीरी सैनिकों ने विदेशी हमलावरों से कश्मीर घाटी को पूर्णरूप से सुरक्षित रखा।

सम्राट अशोक के बाद उसका पुत्र जलौक कश्मीर के सिंहासन पर बैठा । प्रतिदिन शिव की पूजा-अर्चना करने वाला राजा जलौक एक निडर एवं वीर शासक था। जलौक के नेतृत्व में कश्मीरी सैनिकों ने शक हमलावरों से कश्मीर घाटी को पूर्णरूप से सुरक्षित रखा।

हूण-कुषाणों का भारतीयकरण

राजा जलौक के पश्चात तीन शताब्दियों तक कश्मीर में किसी प्रतिभाशाली शासक के ना होने के कारण राज्य व्यवस्था चरमरा गई। कश्मीर पर कुषाण आक्रान्ता राजा कनिष्क ने सैन्यबल से अपना आधिपत्य जमा लिया। राजनीति, कूटनीति और सैन्य अभियान में सिद्धहस्त कनिष्क पर कालांतर में भारतीय संस्कृति का प्रभाव पड़ा। कनिष्क ने बौद्धमत अपना लिया और इसे राजधर्म घोषित कर दिया। इसी कालखण्ड में तृतीय अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध परिषद का सम्मेलन कश्मीर

लद्दाख का इतिहास

जब जोरावर सिंह ने तिब्बत फतह किया

लद्दाख का जो इतिहास उपलबध है, उसके अनुसार इस क्षेत्र में ढाई हजार साल पहले छोटे-छोटे राज्यों में स्वतंत्र ठिकाने थे और सभी हिन्दू थे। सम्राट अशोक के समय जब कश्मीर में बौद्ध-मत प्रभावी हुआ, तब लद्दाख भी बौद्ध बन गया। सन् ७२७ ई.में इस क्षेत्र की यात्रा करने आये चीनी **हुई चाओ** ने लिखा है-*''बौद्ध सम्प्रदाय जो भारत में फैला था, वह लद्दाख में तिब्बत से भी पहले पहुँचा। बाद में जब शेष भारत में बौद्धों का प्रभाव क्षीण हो गया तो भी लद्दाख तिब्बत के प्रभाव से बौद्ध बना रहा।''* कश्मीर के प्रसिद्ध सम्राट ललितादित्य मुक्तापीड़ ने सन् ७४५ई. में लद्दाख जीत लिया। लगभग एक शताब्दी तक कश्मीर का आधिपत्य इस क्षेत्र में रहा। बाद में सन् ८४२ई. मे **लाचेन** वंश लद्दाख में राज करने लगा। **उस समय पश्चिमी तिब्बत, गिलगित और बाल्टिस्तान लद्दाख के ही हिस्से थे।**

लाचेन वंश का रिंचन सत्ता के लालच में बौद्ध से मुसलमान बन गया और उसने षड़यंत्रपूर्वक कश्मीर पर भी अधिकार जमा लिया। लद्दाख में रिंचन के शासन-काल में भी बौद्ध-मत ही प्रभावी रहा। मुगलों के काल में लद्दाख फिर स्वतंत्र हो गया और लामाओं ने इस क्षेत्र में सत्ता कायम कर ली। इनमें **सेंगे नामग्याल** (१६१६-४२) सबसे प्रसिद्ध हुए। गिलगित, बाल्टिस्तान तथा तिब्बत का पश्चिमी क्षेत्र तक भी सेंगे नामग्याल के अधिकार में थे। इन्होंने लद्दाख में कई मठों का निर्माण कराया जिनमें प्रमुख **हामिश-मठ** हैं, जिसमें ईसा की हस्तलिखित पुस्तक आज भी रखी है। लेह का प्रसिद्ध नौ मंजिला महल भी नामग्याल ने ही बनवाया था।

महाराज गुलाब सिंह के सेनापति जनरल जोरावर सिंह महापराक्रमी योद्धा और कुशल व्यूह रचनाकार थे। १८३४ में उन्होंने लद्दाख को फिर से जम्मू-कश्मीर का हिस्सा बना दिया। १८४१ में साहसी जनरल ने तिब्बत पर आक्रमण किया। यह बड़ा साहसिक अभियान था। बर्फीले क्षेत्र की कड़कड़ाती सर्दी में पहाड़ों, घाटियों के बीच से सैनिक अभियान करना जबर्दस्त चुनौती थी। जोरावर सिंह ने रुडोक, गारो और टक्लालाकोट जीत लिया। इसके बाद दुर्भाग्य से उनकी सेना बर्फीले तूफान में फँस गई।

समुद्र तट से १५००० फीट की ऊँचाई पर कश्मीरी सेना के सामने यह एक बेढब चुनौती आ गई। ऊँचाई और शीत के अभ्यस्त तिब्बतियों ने जनरल पर चारों ओर से हमला बोल दिया। भारतीय इतिहास के पराक्रमी योद्धाओं में से एक जनरल जोरावर सिंह वीरगति को प्राप्त हुए। इससे कश्मीर के डोगरी योद्धा हताश नहीं हुए। दीवान हरिचन्द एक नई सेना लेकर ल्हासा पर झपटे। तिब्बतियों ने इस स्थिति में सन्धि करना ही उचित समझा। लद्दाख पूरी तरह पुनः जम्मू-कश्मीर का अंग बन गया।

इसी के साथ तिब्बत का पश्चिमी भाग भी जम्मू-कश्मीर तथा महाराजा रणजीत सिंह के साम्राज्य का भू-भाग बन गया। (सं.)

में हुआ।

कुषाण राजाओं के बौद्धमत को स्वीकार करते ही भारत में कुषाणों का भारतीयकरण हो गया और बौद्ध मत दूरस्थ क्षेत्रों लंका, बर्मा, जावा, मध्य एशिया, तिब्बत और चीन तक फैल गया।

छठी शताब्दी के प्रारंभ (५२५ ई.) में हूणों ने कश्मीर पर विजय प्राप्त कर ली। हूणों का नेता मिहिरकुल, कश्मीर के इतिहास में 'क्रूर शासक' के नाते जाना जाता है। उसने बौद्धमत एवं शैवमत के उपासकों पर जघन्य अत्याचार शुरू कर दिए । वास्तव में वह षड़यंत्रों के सहारे ही कश्मीर पर अपना आधिपत्य जमाने में सफल हुआ था।

उस समय कश्मीर में शैवमत इतना प्रभावी था कि शिव-उपासकों की संगठित शक्ति ने मिहिरकुल को शिव जी की शरण में आने के लिए बाध्य कर दिया। उसने न केवल शैव पंथ अपनाया, अपितु प्रसिद्ध मिहिरेश्वर मंदिर का निर्माण भी करवाया। यह मंदिर आजकल पहलगांव में मामलेश्वर मंदिर के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार कनिष्क और कुषाणों तथा मिहिरकुल और हूणों का भी भारतीयकरण कश्मीर की धरती पर ही हुआ।

हिमालय से लंका तक एक भारत

राजा कनिष्क के प्रयासों के फलस्वरूप बौद्ध रिलीजन अफगानिस्तान एवं तुर्किस्तान तक फैल चुका था । अतः कनिष्क के पश्चात कश्मीर के सिंहासन पर बैठे प्रतिभाशाली राजा मेघवाहन ने भी बौद्धमत के प्रचार हेतु एक अनूठा अभियान प्रारंभ किया जो विश्व के इतिहास में अतुलनीय है। उसने समूचे विश्व में प्राणी हिंसा के निषेध का निश्चय करके कश्मीर में पशुओं के वध पर प्रतिबंध लगा दिया।

तत्पश्चात मेघवाहन ने इस कार्य को संपन्न करने के लिए दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। कश्मीर के राजभवन पर जो ध्वज (भगवा) लहराता था, उसका ध्वजदण्ड राजा मेघवाहन को श्रीलंका के राजा ने प्रदान किया था (राजतरंगिणी ३/२७)। हिमालय से सुदूर दक्षिण तक भारत के एकत्व का यह एक अनूठा उदाहरण है।

मेघवाहन के कालखण्ड के बाद वर्ष ७१३ई. में कश्मीर के इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठों पर कर्कोटा वंश का २५४ वर्षों का राज्य स्वर्णिम अक्षरों में वर्णित है। इसी वंश में चन्द्रापीड़ नामक राजा ने कश्मीर में एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। इसने चीन के राजदरबार में अपना एक दूत इस आशय से भेजा कि चीन के सहयोग से अरब के आक्रमण को रोका जाये। इसी राजा के कालखण्ड में अरबों पर नकेल कसी गई।

पराक्रमी कर्कोटा वंश

साहस और पराक्रम की प्रतिमूर्ति सम्राट ललितादित्य मुक्तापीड़ का नाम कश्मीर के इतिहास में सर्वोच्च स्थान पर है। इस सम्राट का **सैंतीस** वर्षों का शासनकाल उसके सफल सैनिक अभियानों, अद्भुत युद्ध कौशल और भारत को दिग्विजयी भी बनाने की दृढ़ इच्छा से पहचाना जाता है। इसका साम्राज्य विस्तार पूर्व में तिब्बत से लेकर पश्चिम के इरान और तुर्किस्तान तक तथा उत्तर में मध्य एशिया से लेकर दक्षिण में उड़ीसा और द्वारिका समुद्र तटों तक पहुंच गया था।

सम्राट ललितादित्य का अत्यंत सुंदर और चिरस्मरणीय कार्य है उसके द्वारा निर्मित विशाल मार्तण्ड मंदिर, जिसे सम्राट ने भगवान सूर्य देव को समर्पित किया था। सम्राट ललितादित्य एक अद्वितीय योद्धा, विजेता, वास्तुकला प्रेमी एवं साहित्य प्रेमी तो था ही, वह एक अतिकुशल प्रशासक भी था। अपने राज्य में उसने सर्वदूर सुख-शांति और समृद्धि स्थापित की। सम्राट ललितादित्य के पश्चात कश्मीर की राजगद्दी पर कर्मयोगी **सम्राट अवन्तिवर्मन** का अट्ठाइस वर्षों का शासनकाल विशेष महत्व रखता है। उसने अपने राज्य के विकास कार्यों की ओर और अधिक ध्यान दिया। उसने सारे प्रदेश में जन-सुविधाएं जुटाने हेतु अनेक परियोजनाएं प्रारंभ की। उसने अनेक मठ मंदिर अपनी देखरेख में बनवाए।

अवन्तिवर्मन के पश्चात उसका पुत्र शंकरवर्मन राज्यसिंहासन पर बैठा। इस सम्राट ने भी अपने राज्य को अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक विस्तार कर मजबूत किया। उल्लेखनीय है कि सम्राट ललितादित्य के समय कश्मीर सैन्य दृष्टि से शक्तिशाली बना। सम्राट अवन्तिवर्मन के समय कश्मीर आर्थिक दृष्टि से संपन्न हुआ, परंतु शंकरवर्मन के समय कश्मीर दोनों ही क्षेत्रों में विश्व का अग्रणी राज्य बन गया। ■

– २२, करोल बाग, नई दिल्ली

विज्ञापन

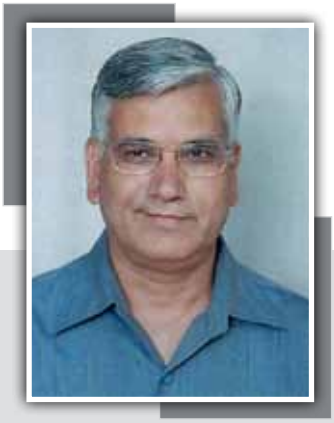

केदार चतुर्वेदी
पूर्व वरिष्ठ महाप्रबंधक (विपणन विभाग)
भारतीय तेल निगम

कश्मीर के महापुरुष

कल्हण और ललितादित्य महान् की धरती है कश्मीर

अगर पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है तो यहीं है, यहीं हैं, यहीं है, कवि फिरदौस की कश्मीर के बारे में लिखी यह उक्ति अतिशयोक्ति नहीं है। भारत भूमि का यह मुकुट जिसे हम कश्मीर नाम से जानते हैं इतना भव्य और मनोरम है कि मनुष्य ने इसका निर्माण किया होगा यह बात हृदयंगम नहीं होती। अवश्य ही इस पुण्यभूमि को विधाता ने स्वयं अपने हाथों से गढ़ा होगा या फिर किसी संत-महात्मा ने अपनी गहन साधना से इस सुन्दरतम स्थान का निर्माण किया होगा। **नीलमत पुराण** में इसी सत्य को उद्घाटित किया गया है। महर्षि कश्यप ही वे आदि ऋषि थे जिन्होंने घोर तपस्या कर कश्मीर का निर्माण किया था।

कश्मीर का लिखित इतिहास महाभारत काल से प्रारम्भ होता है। संस्कृत के उद्भट विद्वान और प्रसिद्ध इतिहासकार महर्षि कल्हण द्वारा रचित राजतरंगिणी में कश्मीर के गौरवशाली अतीत और फिर धर्मांध विदेशी लुटेरों द्वारा इसके मानमर्दन की गाथा अंकित की गई है।

कश्मीर ने ऐसे अनेक महापुरुषों को जन्म दिया है जिन्होंने अपने चरित्र और कृतित्व से इस धरा को समृद्ध बनाया। इनके व्यक्तित्व की महक कश्मीर की वादियों में आज तक बसी है। ऐसे कुछ महापुरुषों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

महर्षि कश्यप

नीलमत पुराण के अनुसार ऋषि कश्यप कश्मीर का निर्माण करने वाले हैं। भारत के उत्तर में हिमालय की गोद में स्थित एक बड़ा भूभाग जलमग्न था जिसने एक झील का आकार ग्रहण कर लिया था। इस झील में एक ज्वालामुखी फटने जैसी क्रिया हुई, पर्वतीय चोटियों में दरारें पड़ गईं और झील का पानी बाहर निकल गया। एक अत्यन्त सुरम्य स्थान का निर्माण हुआ जिसका नाम **कश्यप मर्ग** था। अपने सेवाभाव और लोकोपकारी कार्यों के लिए प्रसिद्ध कश्यप ने इस भूभाग को लोगों के रहने योग्य बनाया। परन्तु पानी को स्थाई रूप से बहने का मार्ग देने के लिए एक नदी की आवश्यकता थी।

अपनी साधना द्वारा महर्षि कश्यप ने भगवान शंकर का आह्वान किया जिन्होंने अपने त्रिशूल से एक वितस्ती (बलिस्त) जितनी भूमि खोदकर खुदाई कार्य का श्रीगणेश किया। इस वितस्ती मात्र स्थान से निकलने के कारण इस नदी का नाम वितस्ता पड़ा जिसे आज झेलम कहा जाता है। इस नदी ने रास्ते की बड़ी-बड़ी शिलाओं को तोड़कर अपना मार्ग प्रशस्त किया तथा रास्ते के वन प्रदेशों को उपजाऊ बनाती हुई यह नदी आगे सिन्धु नदी में मिल गई।

कश्यप मुनि ने अनेक उद्योगपति, कृषक, श्रमिक, वैद्य, गृह एवं मार्ग शिल्पियों को इस भूभाग में लाकर बसाया और बहुत सुन्दर नगर और ग्रामों का निर्माण कराया। तत्पश्चात् जनता द्वारा सर्वसम्मति से कश्यप मुनि के पुत्र नील को प्रदेश का राजा घोषित किया गया। पुत्र का राजतिलक कर कश्यप मुनि तीर्थ यात्रा पर निकल गए।

कश्मीर प्रदेश के प्रथम शासक राजा नील थे। इनका राज्य प्रशासन बहुत चुस्त दुरुस्त था। प्रदेश के मनोरम सौंदर्य से आकर्षित होकर अनेक लोग यहाँ आकर रहने लगे। राजा नील ने भिन्न-भिन्न समुदायों के लोगों का स्वागत किया। उन्हें रहने के लिए अनेक सुविधाऐं प्रदान कीं। इन सुविधाओं की वजह से प्रान्त का पर्यटन उद्योग उन्नति करने लगा।

महाराजा जलौक

सम्राट अशोक ने अपने कार्यकाल में पाँच हजार बौद्ध भिक्षुओं को कश्मीर की धरती पर बसाया और बाद में उसका पुत्र जलौक शैव दर्शन से इतना प्रभावित हुआ कि वह शिवभक्त बन गया। अशोक ने भी कश्मीर के प्रसिद्ध विजयेश्वर शिव मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया। यही नहीं उसने दो भव्य शिव मंदिरों का निर्माण भी कराया। वर्तमान श्रीनगर भी सम्राट अशोक ने ही श्रीनगरी नाम से बसाया था।

कल्हण की राजतरंगिणी में ऐसा वर्णन आता है कि कश्मीर को विदेशी आक्रांताओं से बचाने के लिए सम्राट अशोक ने पुत्र प्राप्ति हेतु भगवान शिव की कठोर तपस्या की। उसकी तपस्या फलीभूत हुई और अशोक को जलौक नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। बाद में अशोक को और भी संतानें हुई जिन्हें उसने बौद्ध-मत के प्रचार में लगा दिया। जलौक बड़ा ही निर्भीक था। सम्राट अशोक ने जलौक को ही कश्मीर सहित उत्तरी भारत का शासन सौंपा। उनके शासन काल में शक कुषाण भारत की ओर देखने का दुस्साहस करने लगे थे।

जलौक की वीरता के आगे इन सभी म्लेच्छों ने घुटने टेक दिए। सम्राट जलौक अत्यन्त विद्वान और न्यायप्रिय था। देश के अनेक विद्वानों को जलौक ने प्रोत्साहन तथा सुविधायें देकर कश्मीर में बसाया। उसके शासन काल में कश्मीर के यूनान से प्रगाढ़ सम्बन्ध बने।

सम्राट रात में वेश बदल कर राज्य में घूमा करता था ताकि जनता की समस्याओं का ज्ञान उसे हो सके। इस कारण उसे **नन्दीश्वर** और **बोधिसत्व** की उपमायें मिली। उस समय कश्मीर भारत ही नहीं पूरी दुनिया का सबसे समृद्ध राज्य था।

पर्यावरण रक्षक महाराजा मेघवाहन

कश्मीर के एक प्रतापी नरेश मेघवाहन हुए जिन्होंने वन्यप्राणियों की सुरक्षा के अनूठे प्रबन्ध किए। इस कार्य के लिए अपने आप तक को आहूत करने का अनूठा उदाहरण इतिहास में अन्यत्र नहीं मिलता।

महाराजा मेघवाहन उज्जयिनी के प्रसिद्ध सम्राट विक्रमादित्य के समकालीन थे तथा उनकी अधीनता भी उन्होंने स्वीकार कर ली थी। सम्राट विक्रमादित्य ने कश्मीर की यात्रा भी की थी और पर्यावरण व जीव-रक्षा के मेघवाहन के अभियान में पूरा सहयोग भी किया। कहा जाता है कि मेघवाहन ने राक्षस जाति के लोगों को भी हिंसा छोड़ने के लिये मना लिया था।

मेघवाहन का विवाह असम की राजकुमारी अमृत प्रभा से हुआ था। वह वैष्णव पंथ को मानने वाली थी। उसके आगमन से कश्मीर में वैष्णव-सम्प्रदाय भी फलने-फूलने लगा। मेघवाहन ने शैव, वैष्णव तथा बौद्ध सभी सम्प्रदायों को प्रोत्साहित किया। प्रसिद्ध यूकांग बौद्ध मठ मेघवाहन ने ही बनवाया तथा महारानी अमृत प्रभा के नाम से इसका नाम **अमृत-भवन** रखा। बाद में लामा सेंगे नामग्याल ने इसका नाम यूकांग कर दिया। अहिंसा का संदेश देने के लिये महाराजा मेघवाहन ने कश्मीर से श्रीलंका तक की यात्रा की।

सम्राट चन्द्रापीड़

सन् ६३१ में चीनी यात्री ह्वेन सांग कश्मीर आया था और दो साल तक वहीं रहा। उसने दुर्लभवर्द्धन के शासन का वर्णन किया है। उसने लिखा है कि उस समय कश्मीर एक शक्तिशाली राज्य था और गांधार (अफगानिस्तान) तक उसका नियंत्रण

पराक्रमी सम्राट ललितादित्य मुक्तापीड़

कश्मीर घाटी में असंख्य मंदिरों के भग्नावशेषों में एक भग्नावशेष है वहाँ के विश्व प्रसिद्ध मार्तंड मन्दिर का। भगवान भास्कर के इस विशाल एवं अतुलनीय मन्दिर का निर्माण जिस प्रतापी नरेश ने कराया उसका नाम है सम्राट ललितादित्य मुक्तापीड़। कर्कोटा वंश के ही ललितादित्य ने ७२४ से ७६१ ई.तक शासन किया। उनका शासन काल भारतीय इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ है।

साहस और पराक्रम की प्रतिमूर्ति सम्राट ललितादित्य का नाम कश्मीर के इतिहास में सर्वोच्च स्थान पर है। उनका सैंतीस वर्षों का शासन काल सफल सैनिक अभियानों, सर्वपंथ समभाव पर आधारित जीवन प्रणाली, अद्भुत कला कौशल और भारत को राजनैतिक रूप से एक करने की उनकी चाह से पहचाना जाता है।

ललितादित्य ने दक्षिण में कावेरी के तट तक, पश्चिम में काठियावाड़ (सौराष्ट्र) तक, पूर्व में बंगाल तक सैनिक अभियान किया। उनका उद्देश्य सम्राट समुद्रगुप्त की तरह पूरे भारत को एक सूत्र में बाँधना था। उनके शासन काल में कश्मीर विश्व का सबसे बड़ा तथा शक्तिशाली राज्य था। उत्तर में तिब्बत और मध्य एशिया तक कश्मीर का राज्य फैला हुआ था। उनके शासन की गूँज सुदूर ईरान ईरान तक पहुँच गई थी। भारत की सीमाओं का फिर से ईरान तक विस्तार इस प्रतापी सम्राट ने ही किया था।

प्रसिद्ध कवि भवभूति और वाक्पतिराज को ललितादित्य ही कन्नौज से कश्मीर लाये थे। सम्राट ललितादित्य के साथ कश्मीर में हिन्दू स्वाभिमान का स्वर्णिम युग प्रारम्भ हुआ।

कर्मयोगी महाराजा अवन्तिवर्मन

कश्मीर के लोगों को बाढ़ और अकाल की विभीषिका से बचाने का श्रेय जिस शासक को जाता है उसका नाम है अवन्तिवर्मन। अपने कुशल इंजीनियर सुय्या के साथ मिलकर अवन्तिवर्मन ने विकास, निर्माण और जन कल्याण के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी प्रजा को उन्नति के अवसर और सुविधायें उपलब्ध कराई। उसके द्वारा बनवाए दो वैभवशाली मन्दिर अवन्तीश्वर और अवन्तिस्वामिन के खण्डहरों को आज भी पहलगाम जाने वाले पर्यटक अवन्तीपुर में देखने जाते हैं।

महाराजा अवन्तिवर्मन का २८ वर्षों का शासन-काल (८५५-८८३) कश्मीर की सुख समृद्धि और शांति का काल है। भीषण बाढ़ के कारण एक बार पूरे क्षेत्र में अकाल की स्थिति हो गई थी। महाराजा ने अपने इंजीनियर सुय्या को इसका समाधान निकालने को कहा। सुय्या ने नदियों के अवरोधों को दूर करते हुए छोटे बाँध बनवाये तथा कृषि में क्रांतिकारी सुधार किये। पानी के बहाव को नियंत्रित करने के साथ ही सुय्या ने सिंचाई के नये तरीके भी खोजे। परिणाम यह हुआ कि उत्पादन कई गुना बढ़ गया। वितस्ता (झेलम) के बहाव को मोड़ने का असाध्य काम भी सुय्या ने किया। उनकी तकनीकों से आभास होता है कि आधुनिक युग का कोई विशेषज्ञ पूरी योजना बना रहा हो।

पर्यावरण की रक्षा के मामले में भी महाराजा अवन्तिवर्मन ने दूरदृष्टिपूर्ण कदम उठाये। उन्होंने किसी भी जीव की हत्या को पूरे साम्राज्य में अपराध घोषित कर दिया। वृक्षों की कटाई पर भी राज्य में नियंत्रण था। *राजतरंगिणी में कल्हण लिखते हैं-''नदी-तड़ागों की मछलियाँ भी निर्भय थीं और साद मछली तो किनारे पर धूप सेक कर वापस पानी में चली जाती थी।''* अवन्तीश्वर और अवन्तिस्वामिन मंदिर अवन्तिवर्मन के कला-प्रेम के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। पुलवामा जिले में स्थित अवन्तिपुर महाराजा ने ही बसाया था। आजकल यह अवन्तीपोरा के नाम से जाना जाता है।

राज्य के मन्त्री और शिल्प-शास्त्री (इंजीनियर) सुय्या ने भी **सुय्यापुर** नाम का नगर बसाया था। यह नगर अब **सोपोर** के नाम से जाना जाता है। सुय्या ने डल झील के किनारे सुरेश्वर मन्दिर भी बनवाया। संस्कृत के विद्वान **रामता** और **कल्लत** महाराजा अवन्तिवर्मन के दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

था। दुर्लभवर्धन ने कर्कोटा वंश चलाया था। कश्मीर के इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठों पर कर्कोटा वंश का २५४ वर्षों का शासनकाल स्वर्णाक्षरों से अंकित है। दुर्लभवर्धन ६२४ ई. में कश्मीर का राजा बना।

इसी कर्कोटा वंश में सम्राट चन्द्रापीड़ ने सन् ७११ में शासन सम्भाला और कश्मीर में एक आदर्श एवं शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। यह राजा इतना शक्तिशाली था कि चीन का राजा भी उसकी महत्ता को स्वीकार करता था। अरबों से संघर्ष में चीन के राजा ने अपनी सेना चन्द्रपीड़ की सहायता को भेजी। चन्द्रापीड़ ने चीनी सैनिकों के सहयोग से खलीफा को बुरी तरह हरा दिया।

इसका प्रमाण चीन के राज्य वंश 'ता-आंग' के इतिहास में मिलता है। महाराजा चन्द्रापीड़ बहुत ही न्यायप्रिय थे। इतिहास में उनकी लोकप्रियता का एक प्रसंग राजतरंगिणी में आता है।

खलीफा को परास्त करने वाला शूर शंकरवर्मन

सम्राट अवन्तिवर्मन के बाद उनका पुत्र शंकरवर्मन ईस्वी सन् ८८३ में कश्मीर का राजा बना। उस समय तक अरब के खलीफाओं के भारत पर आक्रमण शुरु हो गये थे। गान्धार प्रदेश (अफगानिस्तान) जो लम्बे समय से भारत का अभिन्न अंग रहा, पर अरबों का दखल हो चुका था। शंकरवर्मन ने इन म्लेच्छों को दण्ड देने का निश्चय किया। लम्बे समय से रुके हुए सैनिक अभियानों को शुरु करते हुए अपनी चतुरंगिणी सेना को चारों दिशाओं में जाने का आदेश दिया। उस समय खलीफा ने लल्लैय्या नाम के एक हिन्दू को वहाँ का सूबेदार बना रखा था। शंकरवर्मन ने द्रुतगति से आक्रमण कर गान्धार (अफगानिस्तान) फतह किया और आर्यान (ईरान) तक अपने राज्य की सीमाओं को कर दिया। दक्षिण और पूर्व में भी शंकरवर्मन ने महाराजा ललितादित्य के काल-खण्ड में कश्मीर के जो क्षेत्र रहे थे, उन पर पुनः विजय पताका फहरा दी। सम्राट शंकरवर्मन के कालखण्ड में कश्मीर में हिन्दू संस्कृति का चहुँमुखी विस्तार व उत्थान हुआ।

महाकवि कल्हण

कल्हण कश्मीरी इतिहासकार तथा विश्वविख्यात ग्रंथ **राजतरंगिणी** के लेखक थे। वे कश्मीर के महाराजा हर्षदेव के महामात्य चंपक के पुत्र और संस्कृत के उद्भट विद्वान थे। राजतरंगिणी को उन्होंने आठ भागों में लिखा है। सच तो यह है कि कल्हण ने इतिहास को काव्य की विषयवस्तु बनाकर भारतीय साहित्य को एक नई विधा प्रदान की है। कश्मीर के प्राचीन इतिहास को समयबद्ध प्रस्तुत करने का अनूठा प्रयास महाकवि कल्हण का था।

संग्राम राज

लुटेरे महमूद गजनवी को दो बार कश्मीर की धरती से पराजित कर भगा देने

एक चर्मकार को भी राष्ट्रहित समझ में आया

एक बार एक विशाल मन्दिर के निर्माण के लिए उचित स्थान पर उपयुक्त भूमि की आवश्यकता थी। सरकारी अफसर भूमि की तलाश के लिए अनेक दूरस्थ स्थानों पर गए। जो भूमि उन्हें मन्दिर निर्माण के लिए पसंद आई वह एक साधारण चर्मकार की थी। उसी में उसकी अपनी झोपड़ी भी थी।

चर्मकार ने अपनी झोपड़ी हटाना अस्वीकार करते हुए जमीन सरकारी नियंत्रण में देने से मना कर दिया। जब राजा तक यह समाचार पहुँचा तो उसने तुरंत भूमि अधिग्रहण के आदेश को रोक दिया।

राजा स्वयं उस चर्मकार की झोपड़ी के द्वार पर पहुँचा। चर्मकार से वार्तालाप करते हुए राजा ने उसे समझाया कि मन्दिर निर्माण का प्रश्न राष्ट्रीय प्रश्न है, अतः इस राष्ट्रीय कार्य में बाधा बनना श्रेयस्कर नहीं। साधारण से चर्मकार को भी राष्ट्रहित की बात समझ में आ गई। राजा के आदेश से उसे कुछ ही दूरी पर भूमि प्रदान कर दी गई और वह चर्मकार अपनी झोपड़ी का सारा सामान सरकारी खर्चे पर उठाकर ले गया।

वाले शासक का नाम था सम्राट संग्राम राज, जिसने कश्मीर प्रदेश पर १००३ से १०२८ ई.तक शासन किया। संग्राम राज महमूद की आक्रमण शैली से परिचित था। इसलिए उसने कश्मीर की सीमाओं की पूरी चौकसी रखने के आदेश दिए तथा सीमावर्ती क्षेत्रों के लोगों को विशेष रूप से प्रशिक्षित किया। इसी का परिणाम था कि महमूद को कश्मीर राज्य की अजेय शक्ति का आभास हो गया और कश्मीर को हस्तगत करने का इरादा उसने त्याग दिया।

राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखने वाले श्रीभट्ट

सन् १४२० में जैन-उल आब्दीन कश्मीर का सुल्तान बना। दो साल बाद उसके सीने में एक भयंकर फोड़ा हो गया। सुल्तान का कोई भी हकीम उसे ठीक नहीं कर पा रहा था। आखिर उसने आयुर्वेद की शरण ली और वैद्य श्रीभट्ट को अपने इलाज के लिये बुलाया। श्रीभट्ट के उपचार से सुल्तान पूरी तरह ठीक हो गया। सुल्तान ने हीरे जवाहरातों का पुरस्कार वैद्य के सामने प्रस्तुत किया। वैद्य श्रीभट्ट ने बड़ी विनम्रता से अपार धन का पुरस्कार अस्वीकार करते हुए कहा- *आयुर्वेद में निःशुल्क चिकित्सा के लिये कहा गया है। फिर भी सुल्तान कुछ देना चाहें तो कुछ सुविधायें हिन्दू समाज को दे दें।* सुल्तान के स्वीकार कर लेने पर श्रीभट्ट वैद्य ने सात सुविधायें माँगी-

१. हिन्दुओं का मतान्तरण व कत्ले-आम बंद हो,

२. तोड़े गये मन्दिर बनवायें जायें,

३. संस्कृत पाठशालायें फिर शुरु हों,

४. जजिया-कर समाप्त किया जाये,

५. गोवध पर रोक लगे,

६. यज्ञ, पूजा-पाठ आदि पर लगी रोक खत्म हो तथा

७. जलाये गये पुस्तकालयों को भी फिर से समृद्ध किया जाये।

वैद्य श्रीभट्ट ने जब उक्त पुरस्कार सुल्तान जैनूल से माँगा तो सुल्तान वैद्य की राष्ट्रभक्ति से बड़ा प्रभावित हुआ। सभी सातों माँगें उसने मान ली। इसी के साथ श्रीभट्ट को उसने **अफसर-उल-अताब** अर्थात् राजवैद्य बना दिया। कुछ वर्षों के लिये कश्मीर में फिर से सुख-समृद्धि आ गई। हिन्दू समाज कश्मीर में लौटने लगा, संस्कृत का पठन-पाठन होने लगा और देश के अन्य भागों से बहुमूल्य पुस्तकें कश्मीर के पुस्तकालयों के लिये आने लगीं।

श्रीभट्ट ने कश्मीर लौटने वाले सभी हिन्दुओं के जाति-भेद समाप्त कर सभी को पण्डित कहे जाने की प्रथा आरम्भ की तभी से कश्मीर में रहने वाले सभी लोग ***पण्डित*** *कहे जाते हैं।*

राजा सुखजीवन मल्ल

कश्मीर पर अफगानों का कब्जा सन् १७५२ में हुआ तथा यह कालखण्ड करीब एक सौ चौंसठ वर्षों तक रहा। अफगान लुटेरा अहमद शाह अब्दाली कश्मीर को लूटकर जब अपने मुल्क वापस लौटा तो उसने अपना मुस्लिम सूबेदार कश्मीर में नियुक्त कर दिया। इस सूबेदार के अधीन जो सैन्य अधिकारी थे उनमें एक हिन्दू सुखजीवन मल्ल भी था। सूबेदार अब्दुल्ला खान काबुली इतना सक्षम नहीं था कि वह शासन को अच्छी तरह सम्भाल सके। ऐसे समय सुखजीवन मल्ल ने काबुली का वध कर कश्मीर को स्वतंत्र करा लिया।

इस राजा के शासन काल में लोग इतने सुखी थे कि आज भी कश्मीर के घरेलू जीवन में एक कहावत प्रसिद्ध है-''वक्ती सुखजू'' अर्थात् सुखजीवन के समय के सुखी दिन। सुखजीवन मल्ल ने अपने मंत्री महानंद धर के साथ कश्मीर में बिना किसी भेदभाव के विकास कार्यों को आगे बढ़ाया। अपनी सेना के ही एक हिन्दू सैन्य अधिकारी बख्त मल्ल के अब्दाली से मिल जाने के कारण सुखजीवन मल्ल को शासन से हाथ धोना पड़ा।

पण्डित बीरबल

कश्मीर पर शासन करने वाला अंतिम अफगान सूबेदार आजिम खान था। उसको शासन में व्याप्त अराजकता समाप्त करने तथा शासन व्यवस्था को सुचारु ढंग से चलाने के लिए योग्य पण्डितों की आवश्यकता महसूस हुई। पण्डित बीरबल धर को उसने इस कार्य

के लिए नियुक्त किया। वे एक कुशल प्रशासक थे। शासन व्यवस्था को उन्होंने चाक चौबन्द कर दिया किन्तु मुस्लिम सरदारों ने षड़यंत्र कर सूबेदार के कान भर दिए। उनके ऊपर करोड़ों के गबन का झूठा आरोप मढ़ दिया गया तथा कश्मीरी पण्डितों पर जुल्म ढाए जाने लगे।

इस परिस्थिति में पण्डितों ने एक गुप्त बैठक की और हिन्दुओं को बचाने के लिए पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह से सैनिक सहायता मांगने का निर्णय लिया। बीरबल धर अपने पुत्र के साथ किसी तरह चुपचाप कश्मीर छोड़कर पंजाब के लिए निकल गए। पीछे से सूबेदार को जब इसकी भनक लगी तो उसने घर की दोनों औरतों को बुला भेजा तथा पिता-पुत्र के सम्बन्ध में पूछताछ की। पण्डित बीरबल की पत्नी ने सूबेदार के समक्ष पेश होने से पहले हीरा निगल लिया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। उनकी पुत्रवधु विधर्मियों के हाथ लग गई जिसे काबुल भेज दिया गया।

ब्रिगेडियर राजेन्द्र सिंह

ब्रिगेडियर राजेन्द्र सिंह कश्मीर के अंतिम शासक महाराजा हरिसिंह की सेना के मुख्य सेनापति थे। जब पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया तो महाराजा हरिसिंह ने भारत सरकार से तत्काल सैनिक सहायता भेजने की गुहार लगाई। रियासती सेना के अधिकांश मुस्लिम अपनी सेना के हिन्दू सैनिकों को मौत के घाट उतार कर पाकिस्तानी सेना में मिल गए थे। ऐसे में शत्रु की चुनौती का अपने मुट्ठी भर सैनिकों के साथ मुकाबला करने में बिग्रेडियर राजेन्द्र सिंह ने अपनी जान की बाजी लगा दी।

उन्होंने थोड़े से सैनिकों के साथ शत्रु को श्रीनगर में घुसने से रोके रखा। शत्रु की गोलियां लगने के बाद भी लहुलुहान हालत में अपने साथी सैनिकों को आगे बढ़ने का हौसला देते रहे। उनका अपने सैनिकों से कहना था, कि दुश्मन मेरी लाश पर ही आगे जा सकेगा। ऐसा ही हुआ। भारत की सेना के आने तक उन्होंने शत्रु सेना को आगे बढ़ने से रोके रखा। श्रीनगर बचा लिया गया। कश्मीर सुरक्षित हो गया। वीर ब्रिगेडियर राजेन्द्र सिंह राष्ट्रधर्म का पालन करते हुए कर्मभूमि में सदा के लिए सो गए।

इस बीच बीरबल पण्डित महाराजा रणजीत सिंह की तीस हजार सेना के साथ वापस लौटे और आजिम खान को कश्मीर से मार भगाया। पवित्र कश्मीर से अत्याचारी शासकों को समाप्त करने में जो भूमिका पण्डित बीरबल और उनके पुत्र ने निभाई उसकी प्रेरणा और आधार स्तम्भ बनीं वह दो महान नारियाँ, जिन्होंने अपना प्राणोत्सर्ग करके और सर्वस्व लुटाकर इस राष्ट्रीय कार्य को सम्पन्न किया। ■

– ८०/७९, मानसरोवर, जयपुर

विज्ञापन

कश्मीर की अमर संस्कृत परम्परा

शास्त्री कौसलेन्द्रदास
सहायक प्रोफेसर,
रामानन्दाचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय,
जयपुर

"भारत के इतिहास में जब कभी पुरातन भाषा की चर्चा होती है, तो निर्विवाद रूप से जिस भाषा का नाम आता है, वह है - संस्कृत। संस्कृत अध्ययन के पुरातन केंद्रों में वाराणसी और दक्षिण भारत के कांची और शृंगेरी के बाद जिस भूभाग का नाम सबसे पहले आता है, वह है कश्मीर। कश्मीर का पुराना संस्कृत नाम कश्यपपुर था जो काश्मीर हो गया और जो अब बदलकर कश्मीर हो गया है। कश्मीर को 'शारदा देश' के नाम से भी पुकारा जाता है। शारदा देश यानी माता सरस्वती का निवास स्थान। इस विशेषण से ही समझा जा सकता है कि कश्मीर में कितने विद्वानों का प्रादुर्भाव हुआ होगा"

कश्मीर भारत में एकमात्र राज्य है जहां अतीत में सबसे लंबे समय तक न सिर्फ पठन-पाठन बल्कि संपर्क भाषा के रूप में भी संस्कृत का प्रयोग हुआ। इंग्लैंड के भाषाशास्त्री **जॉर्ज ग्रिअर्सन** पिछली सदी की शुरुआत में एक दस्तावेज में लिखते हैं, ***''बीते दो हजार सालों के दौरान कश्मीर संस्कृत के पठन-पाठन का सबसे महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहां संस्कृत में दार्शनिक विमर्श से लेकर शृंगार कथाओं तक की रचना हुई।''***

सम्राट अशोक के समय कश्मीर घाटी में बौद्ध पंथ का प्रसार हुआ। उस समय इस क्षेत्र में संस्कृत की महत्ता इसी बात से समझी जा सकती है, कि तब जहां पूरे भारत में बौद्ध-पंथ की मूल बातें पाली में लिखी गईं, वहीं कश्मीर में इसकी शिक्षाएं पहली बार संस्कृत में लिखी गईं। मध्य एशिया तक संस्कृत का प्रसार कश्मीरी विद्वानों ने ही किया था। उस समय न सिर्फ पूरे भारत से छात्र यहां संस्कृत पढ़ने आते थे, बल्कि एशिया के दूसरे देशों के विद्वानों के लिए भी यह संस्कृत अध्ययन का बड़ा केंद्र था। ***चीनी यात्री ह्वेनसांग ने कश्मीर में रहकर संस्कृत के माध्यम से बौद्ध दर्शन का अध्ययन किया था।***

> उद्भट कवि कश्मीर के ही नहीं वरन् पूरी पण्डित परम्परा के ऐसे प्रतिनिधि आज भी बने हुए हैं कि जिस विद्वान् की पूरी प्रशंसा करनी हो, उसे लोग आज भी 'उद्भट' संज्ञा से विभूषित करते हैं। इतना ही नहीं, संस्कृत में आज भी श्रेष्ठ कविता और सूक्तियों को उद्भट कविता कहा जाता है

पाणिनि की जन्मस्थली

संस्कृत व्याकरण के नियम बनाने वाले पाणिनि के बारे में ज्यादातर विद्वानों की राय है कि उनका जन्म ईसा से चौथी सदी पूर्व पाकिस्तान के खैबर पख्तून्ख्वा में हुआ था। लेकिन इतिहासकारों का एक वर्ग कहता है कि **वे दक्षिण कश्मीर के गोद्रा गांव में जन्मे थे।** यही कारण रहा होगा कि पाणिनि की अष्टाध्यायी (संस्कृत व्याकरण का प्राचीन ग्रंथ) पर सबसे ज्यादा टीका कश्मीर के विद्वानों ने ही लिखी हैं।

कश्मीर में संस्कृत १२वीं से १३वीं शताब्दी तक काफी प्रभावी रही। कल्हण का प्रसिद्ध '**राजतरंगिणी**' ग्रंथ इसी समय

बुद्धिमान् राजा जयापीड ने धरती के सारे विद्वानों को अपने कश्मीर राज्य में प्रतिष्ठित कर लिया। इससे दूसरे राजाओं के राज्यों में विद्वानों का अकाल ही पड़ गया।

की रचना है। प्राचीन भारतीय भाषाओं के अध्येता **जॉर्ज बुहेलर** (१८३७ से १८९८) का एक दस्तावेज बताता है कि उन्होंने १८७५ में कश्मीर की यात्रा की थी और तब उनकी २५ से ज्यादा संस्कृत बोलने वाले पंडितों से मुलाकात हुई और ऐसे दसियों शासकीय अधिकारी भी थे जो संस्कृत भली-भाँति बोल लेते थे। पिछली सदी में राजनीतिक उथल-पुथल के चलते कश्मीर में इस भाषा के विकास पर किसी ने ध्यान ही नहीं दिया।

पिछली कुछ शताब्दियों में यहां इस्लाम का प्रभाव बढ़ने लगा। ईराक से आए सूफी मीर सैय्यद शमसुद्दीन के प्रभाव से कश्मीर में इस्लाम मानने वालों की आबादी तेजी से बढ़ी। उसके बाद से क्षेत्र में संस्कृत का प्रभाव घटने लगा। पिछली सदी आते-आते कश्मीरी पंडितों में भी संस्कृत का ज्ञान रखने वाले नाममात्र के लोग ही रह गए।

वसुधैव कुटुम्बकम्, उद्भट और कश्मीर

हमारा देश संस्कृत में लिखे जिस आदर्श वाक्य से अपने औदार्य को चहुं ओर प्रकट करता है, वह है-'वसुधैव कुटुम्बकम्' यानी सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है। पर यह अल्पज्ञात है कि वैर-भाव और अपना-पराया भूलकर सब को अपना बताने वाला यह कथन बारह सौ सालों से ज्यादा पुराना है। इसके लेखक हैं कवि उद्भट। जिस भूमि पर इस उदार भावना को श्लोकबद्ध किया गया, वह भूमि है माता शारदा का निवास स्थान कश्मीर। जिस राजा के शासन में यह ऐतिहासिक वाक्य रचा गया, वे हैं महाराज जयापीड विनयादित्य। पूरा श्लोक इस प्रकार है -

अयं बन्धुः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
पुंसामुदारचित्तानां वसुधैव कुटुम्बकम्।।

श्लोक में तीन पदों से भले छेड़छाड़ हुई हो पर चौथा पद 'वसुधैव कुटुम्बकम्' सर्वत्र समान है, जो हमारी वैदिक चेतना से प्रकाशित है और संसार को भारत के होने का मतलब समझाता है।

उद्भट कश्मीर में हुए महान् संस्कृत कवि थे। वे उद्भट भट्ट, भट्ट उद्भट, उद्भटाचार्य नाम से जाने जाते हैं। महाकवि कल्हण ने राजतरङ्गिणी में लिखा है -*जयापीड विनयादित्य नाम के महान् प्रतापी राजा ने ७७० से ८०१ ईस्वी में ३१ वर्षों तक कश्मीर के राज्यासन को अलंकृत किया।*

अकाल पड़ गया

महाराज जयापीड स्वयं कवित्व-शक्ति से संपन्न थे। इस नाते उन्होंने बहुत-से पण्डितों को उपहार तथा दक्षिणा देकर अपनी सभा में प्रतिष्ठित किया। इन कवियों में भट्ट उद्भट, दामोदर गुप्त, मनोरथ, शङ्खदत्त, चटक, सन्धिमान्, वामन और क्षीर नामक आठ कवि प्रधान थे। इन कवियों के शिरोमणि उद्भट कवि मधुर कविताओं से महाराज जयापीड को सुपरितोषित करके उनसे प्रतिदिन एक लाख मुद्रायें प्राप्त करते थे। इससे उनके पाण्डित्य की महिमा, कवित्व-शक्ति और चित्त-चमत्कारी कविता निर्माण का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इसी अभिप्राय से कल्हण ने राजतरङ्गिणी (४/४९३) में लिखा है -

समग्रहीत्तथा राजा सोऽन्विष्य निखिलान् बुधान्।
विद्वद्दुर्भिक्षमभवद्यथाऽन्यनृपमण्डले।।

बुद्धिमान् राजा जयापीड ने धरती के सारे विद्वानों को अपने कश्मीर राज्य में प्रतिष्ठित कर लिया। इससे दूसरे राजाओं के राज्यों में विद्वानों का अकाल ही पड़ गया।

> क्षेमेन्द्र संस्कृत में परिहास कथा के धनी थे। संस्कृत में उनकी जोड़ का दूसरा सिद्धहस्त परिहास कथा लेखक और कोई नहीं है। उनकी सिद्ध लेखनी पाठकों पर चोट करना जानती थी परंतु उसकी चोट मीठी होती थी

उद्भट कवि ने **कुमारसम्भव, काव्यालङ्कारसंग्रह, भामहालङ्कारविवरण** नामक तीन ग्रन्थ लिखे। प्रतीहारेन्दुराज नामक विद्वान् ने काव्यालङ्कारसंग्रह की 'लघुवृत्ति' टीका लिखकर उद्भट द्वारा इन तीन ग्रंथों के प्रणयन की चर्चा की है। अंग्रेज विद्वान् **वुलार** ने 'काव्यालङ्कारसंग्रह' पर 'कश्मीररिपोर्ट' नामक पत्र में लिखा है-'' उद्भट जयापीड राजा से प्रतिदिन एक लाख मुद्रा प्राप्त करते थे। उद्भट के द्वारा लिखे 'काव्यालङ्कारसंग्रह' नामक अलङ्कार-ग्रन्थ में जो उदाहरण हैं, वे उन्होंने स्वरचित 'कुमारसम्भव' नामक ग्रंथ से लिए थे।''

उद्भट कवि कश्मीर के ही नहीं वरन् पूरी पण्डित परम्परा के ऐसे प्रतिनिधि आज भी बने हुए हैं कि जिस विद्वान् की पूरी प्रशंसा करनी हो, उसे लोग आज भी 'उद्भट' संज्ञा से विभूषित करते हैं। इतना ही नहीं, संस्कृत में आज भी श्रेष्ठ कविता और सूक्तियों को उद्भट कविता कहा जाता है।

हास्य-व्यंग्य के तज्ञ कवि क्षेमेन्द्र

क्षेमेन्द्र कश्मीरी महाकवि थे। वे संस्कृत के विद्वान् तथा अप्रतिम प्रतिभा संपन्न कवि थे। क्षेमेन्द्र ने प्रसिद्ध आलोचक

कश्मीर के प्रमुख संस्कृत साहित्यकार

परम्परागत रूप से कश्मीर का साहित्य संस्कृत में था। कश्मीर के संस्कृत के प्रमुख साहित्यकारों के नाम इस प्रकार हैं –

ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तकाचार्य लगध मुनि, **पंचतन्त्र के रचयिता विष्णु शर्मा**, बौद्ध दर्शन के विद्वान् नागसेन, आयुर्वेद विद्वान् तिसत, आयुर्वेद के विद्वान् और सुश्रुतसंहिता के टीकाकार जैज्झट, आयुर्विज्ञान मनीषी वाग्भट्ट, अलंकारशास्त्र के विद्वान् भामह, बौद्ध दार्शनिक रविगुप्त, साहित्य शास्त्रज्ञ आनन्दवर्धनाचार्य, वसुगुप्त, सोमानन्द, वटेश्वर, रुद्रट, जयन्त भट्ट, भट्ट नायक और मनुस्मृति के टीकाकार **मेधातिथि**।

उत्पलदेव, **महामाहेश्वर आचार्य अभिनवगुप्त,** रघुवंश के टीकाकार वल्लभदेव, गणितज्ञ उत्पल, **क्षेमेन्द्र,** क्षेमराज, बिल्हण, कल्हण और सूक्तिमुक्तावलिकार जल्हण।

महान् संगीतशास्त्रज्ञ **शारंगदेव**, वेदान्ती केशव भट्टाचार्य, मम्मट, कैयट, लोल्लट, कैहट, जैहट, रल्हण, शिल्हण, मल्हण, रुय्यक, कुन्तक, रुचक, उद्भट, शंकुक, **गुणाढ्य,** सोमदेव, पिंगल, जयदत्त, वामन, क्षीरस्वामी, मंख, पुष्पदन्त, जगधर भट्ट, रत्नाकर, माणिक्यचन्द्र।

तथा तंत्रशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् **अभिनवगुप्त** से साहित्यशास्त्र का अध्ययन किया था। इनके पुत्र सोमेन्द्र ने पिता की रचना '**बोधिसत्त्वावदानकल्पलता**' को एक नया पल्लव जोड़कर पूरा किया था। क्षेमेन्द्र संस्कृत में परिहास कथा(हास्य-व्यंग्य) के धनी थे। संस्कृत में उनकी जोड़ का दूसरा सिद्धहस्त परिहास कथा लेखक सम्भवत: और कोई नहीं है। क्षेमेन्द्र ने अपने ग्रंथों के रचना काल का उल्लेख किया है, जिससे इनके आविर्भाव के समय का परिचय मिलता है। कश्मीर के नरेश अनंत (१०२८-१०६३ ई.) तथा उनके पुत्र और उत्तराधिकारी राजा कलश (१०६३-१०८९ ई.) के राज्य काल में क्षेमेन्द्र का जीवन व्यतीत हुआ।

क्षेमेन्द्र के ग्रंथ 'समयमातृका' का रचना काल १०५० ई. तथा इनके अंतिम ग्रंथ 'दशावतारचरित' का निर्माण काल इनके ही लेखानुसार १०६६ ई. है। क्षेमेन्द्र के पूर्वपुरुष राज्य के अमात्य पद पर प्रतिष्ठित थे। फलत: इन्होंने अपने देश की राजनीति को बड़े निकट से देखा तथा परखा था। अपने युग के अशांत वातावरण से ये इतने असंतुष्ट और मर्माहत थे कि उसे सुधारने, पवित्र बनाने में तथा स्वार्थ के स्थान पर परार्थ की भावना दृढ़ करने में इन्होंने अपना जीवन लगा दिया। अपनी द्रुतगामिनी लेखनी को भी इसकी पूर्ति के निमित्त काव्य के नाना अंगों की रचना में लगाया। उनकी सिद्ध लेखनी पाठकों पर चोट करना जानती थी, परंतु उसकी चोट मीठी होती थी।

आचार्य अभिनव गुप्त

'**नर्ममाला**' तथा '**देशोपदेश**' कृतियों में उस युग का वातावरण अपने पूर्ण वैभव के साथ हमारे सम्मुख प्रस्तुत होता है। क्षेमेन्द्र विदग्धी (तपा हुआ तथा निपुण) कवि होने के अतिरिक्त जनसाधारण के भी कवि थे, जिनकी रचना का उद्देश्य विशुद्ध मनोरंजन के साथ-साथ जनता का चरित्र निर्माण करना भी था। 'कलाविलास', 'चतुर्वर्गसंग्रह', 'चारुचर्या', 'समयमातृका' आदि लघु काव्य इस दिशा में इनके सफल उद्योग के समर्थ प्रमाण हैं।

अलंकार-शास्त्र के विद्वान कुंतक

कुंतक अलंकारशास्त्र के एक मौलिक विचारक विद्वान् थे। यद्यपि इनका काल निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हैं, किंतु विभिन्न अलंकार ग्रंथों के अंत:साक्ष्य के आधार पर ऐसा समझा जाता है कि कुंतक दसवीं शती के आसपास हुए। कुंतक अभिधावादी आचार्य थे, जिनकी दृष्टि में अभिधा शक्ति ही कवि के अभीष्ट अर्थ के द्योतन के लिए सर्वथा समर्थ होती है। परंतु यह अभिधा संकीर्ण आद्या शब्दवृत्ति नहीं है। अभिधा के व्यापक क्षेत्र के भीतर लक्षण और व्यंजना का भी अंतर्भाव पूर्ण रूप से हो जाता है। वाचक शब्द द्योतक तथा व्यंजक उभय प्रकार के शब्दों का उपलक्षण है। दोनों में समान धर्म, अर्थ प्रतीतिकारिता है। इसी प्रकार प्रत्येयत्व (ज्ञेयत्व) धर्म के सादृश्य से द्योत्य और व्यंग्य अर्थ भी उपचारदृष्ट्या वाच्य कहे जा सकते हैं। इस प्रकार कुंतक अभिधा की सर्वातिशायिनी सत्ता स्वीकार करने वाले आचार्य थे। कुंतक की एकमात्र रचना '**वक्रोक्तिजीवित**' है, जो अधूरी ही उपलब्ध हैं। वक्रोक्ति को वे काव्य का जीवित अंश (जीवन, प्राण) मानते थे। पूरे ग्रंथ में वक्रोक्ति के स्वरूप तथा प्रकार का

बड़ा ही प्रौढ़ तथा पांडित्यपूर्ण विवेचन है।

वक्रोक्ति का अभिप्राय है–*कविकर्म की कुशलता से उत्पन्न होने वाले चमत्कार के ऊपर आश्रित रहने वाला कथन प्रकार। कुंतक का सर्वाधिक आग्रह कविकौशल या कविव्यापार पर है अर्थात इनकी दृष्टि में काव्य कवि के प्रतिभाव्यापार का सद्य:प्रसूत फल है।*

कश्मीर की देन है काव्य शास्त्र

संस्कृत विद्वान् आचार्य उमेश नेपाल का कहना है, ''**संस्कृत साहित्य में वैज्ञानिक रीति से इतिहास लेखन की परंपरा को चलाने एवं प्रवर्तित करने का काम कश्मीर ने किया।**'' आज तक कल्हण की राजतरंगिणी को इतिहास के विद्वान् जितने सम्मान से देखते हैं, उतने सम्मान से संस्कृत साहित्य के किसी दूसरे ग्रंथ को नहीं देखते। शैवदर्शन की प्रमुख दो धाराएं – **प्रत्यभिज्ञा दर्शन एवं सिद्धान्त शैव,** भारत को कश्मीर की ही देन है। समूचे दक्षिण भारत में शिव भक्ति का मूलभूत दर्शन **सिद्धान्त शैव** है। इस प्रकार दार्शनिक, सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में शिवभक्ति के तानाबाने को बुनने का काम कश्मीर ने ही किया है। संस्कृत का काव्य शास्त्र लगभग कश्मीरियों की ही बपौती है, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है।'

कश्मीर के ११वीं सदी के एक कवि बिल्हण के शब्दों में, '**कश्मीर में तो महिलाएं भी धाराप्रवाह संस्कृत और प्राकृत (संस्कृत के बाद की भाषाएं) में बात करती हैं।**'

बिना छात्रों का विभाग

२०१५ के 'सत्याग्रह' की एक रिपोर्ट के अनुसार अब जिस आंगन में संस्कृत पली-बढ़ी, वहां इसका कोई नामलेवा तक नहीं है। कभी संस्कृत अध्ययन के सबसे महत्वपूर्ण केंद्र रहे कश्मीर में अब कश्मीर यूनिवर्सिटी जैसे संस्थान का संस्कृत विभाग बिना छात्रों के ही चल रहा है।

कश्मीर यूनिवर्सिटी का संस्कृत विभाग १९८३ में काफी धूमधाम से शुरू हुआ था। १९९० में यहां के हालात बिगड़ने पर इसे बंद करना पड़ा। २००१ में यह फिर शुरू तो हो गया लेकिन तभी से छात्रों की कमी से जूझ रहा है। विभागाध्यक्ष जोहरा अफजल बताती हैं, *''हम यहां संस्कृत के बारे में जागरूकता फैलाने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन कुछ खास नहीं हो पा रहा।''* विभाग ने २००७ से २०१२ के बीच संस्कृत भाषा पर कई राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सेमीनार भी करवाए हैं लेकिन इससे भी कोई खास फर्क नहीं पड़ा।

कश्मीर विश्वविद्यालय में छात्रों के न होने का एक तकनीकी पक्ष यह भी है कि राज्य में कोई ऐसा कॉलेज नहीं है जहां स्नातक के स्तर पर संस्कृत पढ़ाई जाती हो। अब घाटी में स्थिति सामान्य होने लगी है, उससे आशा है कि देश के दूसरे हिस्सों से लोग यहां संस्कृत पढ़ने आएं। यह संस्कृत और देश के भविष्य के लिये अत्यंत श्रेयस्कर होगा। ■

– सुशीलपुरा, सोडाला, जयपुर

विज्ञापन

सतीश पेडणेकर
वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखक

सूफी सैयद हमदानी ने किया

कश्मीर का इस्लामीकरण

कश्मीर में इस्लामीकरण की शुरुआत १३७९ में कुतुबुद्दीन के शासनकाल में तथा कथित फारसी संत और विद्वान सैयद अली हमदानी का अपने शिष्यों के साथ कश्मीर आगमन से मानी जाती है। सुल्तान ने उनका स्वागत किया और श्रीनगर में झेलम के दक्षिणी किनारे पर उन्हें जमीन दी गई और इस तरह खानकाह-ए-मौला के नाम से कश्मीर में पहले खानकाह (सूफी मठ) का निर्माण हुआ। खानकाह (मठ) ने अपने शागिर्दों को पूरे कश्मीर में इस्लाम प्रचार के लिए भेजा। साथ ही उसने सुल्तान को शरिया की शिक्षा दी। कश्मीर के इस्लामीकरण में बड़ा नाम 'मीर सैय्यद अली हमदानी' का ही आता है। हमदानी कहने को सूफी संत था मगर कश्मीर में कट्टर इस्लाम का उसे पहला प्रचारक कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

प्राचीनकाल में कश्मीर शैव और बौद्ध सम्प्रदाय का केंद्र था। मगर बाद में तस्वीर बदल गई। अब वह मुस्लिम बहुल हो गया। जब भी हम कश्मीर के इतिहास के पन्ने खोलते हैं, तो कश्मीर का इतिहास रक्तरंजित होने के साथ ही इस्लामी आक्रमण का वह इतिहास रहा है जिसने कश्मीर के वास्तविक और हिंदू नायकों को इतिहास से लुप्त किया है।

फारसी इतिहासकारों ने उन नायकों का हर चिन्ह मिटाने का प्रयास किया, जिन्होंने भारतीयता को कश्मीर में जीवित रखने का प्रयास किया।

कभी शैव विचारधारा की पवित्र भूमि कही जाने वाले कश्मीर में आज 'अजान' और 'आतंकवादियों' की गोलियां सुनाई देती हैं।

क्रूर सुल्तान

भारत में मुस्लिम सभ्यता के आगमन के बाद कश्मीर १५८९ में मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गया। इस समय मुगल बादशाह अकबर का शासन था। मुगल साम्राज्य के बाद कश्मीर पर पठानों का कब्जा हो गया था। इस समय कश्मीर में किसी भी प्रकार का विकास नहीं किया गया। सुल्तान सिकन्दर बुतशिकन ने यहां के मूल कश्मीरी हिन्दुओं को मुसलमान बनने पर या राज्य छोड़ने पर या मरने पर मजबूर कर दिया। कुछ ही सदियों में कश्मीर घाटी में मुस्लिम बहुमत हो गया।

नरेंद्र सहगल की पुस्तक 'व्यथित जम्मू-कश्मीर' बताती है कि जब ईरान, ईराक और तुर्किस्तान को अपने पैरों तले सुल्तान महमूद गजनवी ने रौंदा तो वह यह सोचने लगा था कि वह कश्मीर को अपना बना लेगा। इसी इच्छा के चलते उसने दो बार भारत पर हमला भी किया लेकिन कश्मीर की वादियों से उसको खाली हाथ लौटना पड़ा था।

महमूद का मान-मर्दन

गजनवी का हिन्दू कश्मीर पर पहला हमला तो १०१५ ई. को बताया जाता है। उस समय उसे तौसी नामक मैदान में घेरकर मारा गया था। इसके बाद एक मुस्लिम इतिहासकार नजीम ने अपनी पुस्तक 'महमूद ऑफ गजनी' में लिखा है कि १०२१ में कश्मीर पर दोबारा आक्रमण कर जीतने इच्छा से आये गजनी को बर्बादी की संभावना से डरकर दुम दबाकर भागना ही उचित लगा। हिन्दू कश्मीर को जीतने का विचार उसने सदा सर्वदा के लिए त्याग दिया।

तो कश्मीर पर इसे हम शायद एक तरह से पहला मुस्लिम आक्रमण भी बोल सकते हैं। लेकिन हिन्दुओं की शक्ति उन दिनों वाकई अच्छी थी। ११२८ से ११५० ईस्वी तक **शूरवीर राजा जयसिंह** के कश्मीर पर राज करने का वर्णन है। इस काल में मुस्लिम लोग कश्मीर में घुसे और उन्होंने युद्ध नहीं किया अपितु भीख के रूप में रहने की जगह मांगी थीं। तबसे यहां मस्जिदें बननी लगीं और मुस्लिम अधिक तेजी से जनसंख्या बढ़ाने लगे।

कुटिल रिंचन

तेरहवीं सदी में कश्मीर के राजा सहदेव के समय मंगोल आक्रमणकारी दुलचा ने आक्रमण किया। इस अवसर का फायदा उठा कर तिब्बत से आये एक बौद्ध **रिंचन** ने इस्लाम कबूल कर अपने मित्र तथा सहदेव के सेनापति रामचंद्र की बेटी कोटारानी के सहयोग से कश्मीर की गद्दी पर अधिकार कर लिया। इस तरह वह कश्मीर (जम्मू या लद्दाख नहीं) का पहला मुस्लिम शासक बना।

कालांतर में शाहमीर ने कश्मीर की गद्दी पर कब्जा कर लिया और इस तरह उसके वंशजों ने लंबे काल तक कश्मीर पर राज किया। आरम्भ में ये सुल्तान दिखावे के लिये सहिष्णु रहे लेकिन शाह हमादान के समय में शुरू हुआ इस्लामीकरण सुल्तान सिकन्दर के समय अपने चरम पर पहुंच गया। इस काल में हिन्दू लोगों को इस्लाम कबूल करना पड़ा और इस तरह धीरे-धीरे कश्मीर के अधिकतर लोग मुसलमान बन गए जिसमें जम्मू के भी कुछ हिस्से थे। शाह हमादान के बेटे मीर हमदानी के नेतृत्व में मंदिरों को तोडने और तलवार के दम पर इस्लामीकरण का दौर सिकन्दर के बेटे अलीशाह तक चला।

सूफी ने काली मंदिर तोड़ा

श्रीनगर में हमदानी का खानखा-ए -मौला के नाम से बना स्मारक पहले 'काली देवी का मंदिर' था। इस पर कब्जा कर इसे इस्लामिक मठ में जबरन परिवर्तित किया गया था। सबसे खेदजनक बात यह है कि वर्तमान में कश्मीरी हिन्दुओं की एक पूरी पीढ़ी हमदानी के इतिहास से पूरी प्रकार से अनभिज्ञ है। कुछ को सूफियाना नशा चढ़ा है। वे सूफियों को हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रतीक समझते हैं।

यह मीर सैय्यद अली हमदानी ही था जिसने कश्मीर के सुल्तान को हिन्दुओं के

> कश्मीर के इस्लामीकरण में देशी सूफियों का भी बड़ा हाथ रहा। इनमें कालनेमि के समान कपटी नंद ऋषि प्रमुख थे जिनका असली नाम नुरुद्दीन था। हमदानी के मंदिर ध्वस्त करो अभियान से कश्मीरी हिन्दू समाज में रोष व्याप्त हो गया था। शेख नुरूद्दीन ने कश्मीर के इस्लामीकरण का दूसरा मार्ग पकड़ा। उसने इस्लाम पर हिन्दू धर्म का रंग चढ़ाकर प्रचार प्रारंभ किया

सम्बन्ध में राजाज्ञा लागू करने का परामर्श दिया था। उसने सलाह दी कि हिन्दुओं को नए मंदिर बनाने की कोई इजाजत न हो न पुराने मंदिर की मरम्मत की कोई इजाजत दी जाये। मुसलमान यात्रियों को हिन्दू मंदिरों में रुकने की इजाजत हो। मुसलमान यात्रियों को हिन्दू अपने घर में कम से कम तीन दिन रखें और उनकी सेवा करें। कोई हिन्दू इस्लाम ग्रहण करना चाहे तो उसे कोई रोकटोक न हो।

१३९३ में सैयद अली हमदानी के साहबजादे मीर सैयद हमदानी की सरपरस्ती में सूफी संतों और उलेमाओं की दूसरी खेप कश्मीर आई। मीर हमदानी इस्लाम की स्थापना के लिए हर तरह की जोर जबरदस्ती का हामी था।

मुसलमान बनो या मरो

हिन्दू कश्मीर को इस्लामी राष्ट्र में बदलने के खतरनाक इरादों को इतिहासकार एम डी सूफी ने '**कश्मीर**' पुस्तक में विस्तार से लिखा है। मुस्लिम इतिहासकार हसन ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ कश्मीर' में मतांतरण का जिक्र इस प्रकार किया है कि **'सुल्तान सिकंदर ने (१३९३) में शहरों में घोषणा करा दी थी कि जो हिन्दू मुसलमान नहीं बनेगा वह या तो देश छोड़ दे या फिर मार डाला जाए।** इस तरह सुल्तान सिकंदर ने लगभग सात मन जनेऊ हिन्दू से मुसलमान बनने वालों से जमा किये और जला दिए। धार्मिक ग्रंथों को जला दिया गया, मंदिरों को ध्वस्त कर वहां एवं अनेक मस्जिदें बनवाई गयीं।

इतिहासकार हसन के अनुसार 'सबसे पहले सुल्तान सिकंदर की दृष्टि हिन्दू कश्मीर के विश्व प्रसिद्ध मंदिर **मार्तण्ड सूर्य मंदिर** पर पड़ी। उसने इसे तोड़ देने का निर्णय किया। लेकिन इसे तोड़ने में एक वर्ष का समय लगा और बाद में इसमें लकडियां भरकर आग लगा दी गयी थी।

इस तरह से जो कश्मीर कभी हिन्दुओं का स्वर्ग होता था, वह धीरे-धीरे हिन्दुओं का कब्रिस्तान बना दिया गया। आजादी के बाद पंडितों के साथ जो हुआ, वह तो बस कश्मीर से हिन्दुओं का अंत ही था।

सुहा भट्ट का राष्ट्र-द्रोह

हमदानी के प्रभाव में सबसे पहले जो लोग आये उनमें सुल्तान का ताकतवर मंत्री सुहा भट्ट था। हमदानी ने उसको मुसलमान बना कर मलिक सैफुद्दीन का नाम दिया और उसकी बेटी से विवाह किया। सुहा भट्ट ने कालांतर में अपनी क्रूरता से सबको

मुसलमान बनो अन्यथा मौत या देश निकाला

एक अंग्रेज इतिहासकार डॉ. अर्नेस्ट ने अपनी पुस्तक 'बियोंड दा पीर पंजाल' में मुस्लिम सुल्तानों के अत्याचारों को इस तरह लिखा है-''दो-दो हिन्दुओं को जीवित ही एक बोरे में बंद कर झील में फेंक दिया जाता था। हिन्दुओं के सामने केवल तीन ही विकल्प थे या तो वे मुसलमान बनें, या मौत को स्वीकार करें, या फिर संघर्ष करते हुए बलिदान दे दें। सिकंदर ने सरकारी आदेश जारी कर दिया-इस्लाम-मौत अथवा देश निकाला।''

मुसलमान इतिहासकार हसन के अनुसार सबसे पहले सुल्तान सिकंदर की दृष्टि मटन (कश्मीर) के विश्व प्रसिद्ध मार्तण्ड सूर्य मंदिर पर पड़ी। इस मंदिर को तोड़ने, जलाने और पूरी तरह बर्बाद करने में ही लगभग दो वर्ष लग गए।

मार्तण्ड मंदिर के चारों ओर के गांव को इस्लाम कबूल करने के आदेश दे दिए गए। जो नहीं माने वे परिवारों सहित तलवार की भेंट चढ़ा दिए गए। इसी प्रकार कश्मीर के प्रसिद्ध देवस्थल बिजवेश्वर मंदिर और उसके आसपास के तीन सौ से ज्यादा मंदिर सुल्तान के आदेश से तुड़वा दिए गए। इतिहासकार मुहम्मद हसन के मुताबिक बिजवेश्वर मंदिर की मूर्तियों और पत्थरों से वहीं मस्जिद का निर्माण किया गया। इसी क्षेत्र में कई खानकाहें (मठ) बनवाई गईं, जिन्हें बिजवेश्वर खानकाह कहते हैं।

हिन्दू उत्पीड़न और बलात मतान्तरण का यह खूनी फाग प्रत्येक मुस्लिम सुल्तान के समय तेजी से चला। औरंगजेब ने अपने शासनकाल के पचास सालों में १४ सूबेदार इसी काम में भेजे। हिन्दुओं के हाथ-पांव काटने, उनकी संपत्ति हथियाने, उन्हें कारावास में डालने, सजाए मौत देने, महिलाओं के साथ बलात्कार करने और हिन्दुओं पर जजिया-कर लगाने जैसे जुल्म एक-साथ युद्ध स्तर पर शुरु हो गए। परिणामस्वरूप हिन्दू कश्मीर की सनातन संस्कृति बर्बाद हो गई। मानव इतिहास की दुर्लभ कलाकृतियाँ खंडहरों में बदल गई। भारतीय सनातन हिंदू कश्मीर के मतान्तरण और बर्बादी की यह रक्तरंजित कहानी बहुत लंबी है। सन् १३३९ से शुरु हुआ कश्मीर का चेहरा बिगाड़ने वाला यह काला इतिहास १९८९ में हुए कश्मीरी हिन्दुओं के सामूहिक नरसंहार एवं पलायन तक जारी रहा।

पीछे छोड़ दिया और सिकंदर के नेतृत्व में कश्मीर में मंदिरों के ध्वंस और इस्लामीकरण का संचालक बना। इस दौर को कश्मीर में ताकत के जोर से इस्लामीकरण का दौर कहा जा सकता है।

सुहा भट्ट के प्रभाव में सुल्तान ने शराब, संगीत, नृत्य और जुए पर पाबंदी लगा दी, हिन्दुओं पर जजिया लगा दिया गया और माथे पर कश्का (तिलक) लगाना प्रतिबंधित कर दिया। सोने और चांदी की सभी मूर्तियों को पिघला कर सिक्कों में तब्दील कर दिया गया और सभी हिन्दुओं को मुसलमान बन जाने के आदेश दिए गए।

सूफी नहीं जिहादी

कश्मीर के इस्लामीकरण में सूफियों की अहम भूमिका रही। इसमें विदेशी ही नहीं वरन देशी सूफियों का भी बड़ा हाथ रहा। इनमें कालनेमि के समान कपटी नंद ऋषि प्रमुख थे जिनका असली नाम नुरूद्दीन था। हमदानी के मंदिर ध्वस्त करो अभियान से कश्मीरी हिन्दू समाज में रोष व्याप्त हो गया था। शेख नुरूद्दीन ने कश्मीर के इस्लामीकरण का दूसरा मार्ग पकड़ा। इस्लाम के मतांतरण अभियान पर हिन्दू धर्म का रंग चढ़ाकर प्रचार प्रारंभ किया। कभी कश्मीर में एक शिव उपासक योगिनी लालदेवी का बहुत नाम था। लोग उसे प्यार से लाल देद कहते थे। लाल देद की कविताएं घर-घर गाई जाती थी। कश्मीरी जनता में उनका बहुत सम्मान था।

लाल देवी के भक्त नुरूद्दीन को भी उसी दृष्टि से देखने लगे। फिर चालू हुआ मतांतरण का सिलसिला जो हर सूफी का वास्तविक उद्देश्य होता है।

मुगलों का शासन

१५४० में हुमायूं के एक सिपहसलार मिर्जा हैदर दुगलत ने सत्ता पर कब्जा कर लिया। उसका शासनकाल १५६१ में समाप्त हुआ जब स्थानीय लोगों के एक विद्रोह में उसकी हत्या कर दी गई। उसके बाद चले सत्ता संघर्ष में चक विजयी हुए और अगले २७ सालों तक कश्मीर में लूट, षड्यंत्र और अत्याचार का बोलबाला इस कदर हुआ कि कश्मीर के कुलीनों के एक धड़े ने बादशाह अकबर से हस्तक्षेप की अपील की। अकबर की सेना ने १५८९ में कश्मीर पर कब्जा कर लिया और इस तरह कश्मीर मुगल शासन के अधीन आ गया।

१६ अक्टूबर १५८९ को मुगल सिपहसालार कासिम खान मीर ने चक शासक याकूब खान को हराकर कश्मीर पर मुगलिया सल्तनत को स्थापित किया। इसके बाद अगले ३६१ सालों तक घाटी पर मुगल, अफगान, सिख, डोगरे आदि का शासन रहा। मुगल शासक औरंगजेब और उसके बाद के शासकों ने हिन्दुओं के साथ-साथ यहां शिया मुसलमानों पर भी दमनकारी नीति

अपनाई जिसके चलते हजारों लोग मारे गए।

हरि सिंह नलवे का जलवा

मुगल वंश के पतन के बाद १७५२-५३ में अहमद शाह अब्दाली के नेतृत्व में अफगानों ने कश्मीर (जम्मू और लद्दाख नहीं) पर कब्जा कर लिया। अफगानी मुसलमानों ने कश्मीर की जनता (मुस्लिम, हिन्दू आदि सभी) पर भयंकर अत्याचार किए। यह लूट-खसोट का कार्य पांच अलग-अलग पठान शासकों के राज में जारी रहा। ६७ साल तक पठानों ने कश्मीर घाटी पर शासन किया। हरि सिंह नलवे ने सन १८१९ में कश्मीर को आजाद करा लिया।

कुछ समय बाद जम्मू के डोगरा राजा गुलाब सिंह डोगरा ने जम्मू के साथ-साथ कश्मीर पर भी अधिकार कर लिया। डोगरा वंश भारत की आजादी तक कायम रहा। १८३९ में रणजीत सिंह की मौत के साथ लाहौर का सिख साम्राज्य बिखरने लगा। अंग्रेजों के लिए यह अफगानिस्तान की खतरनाक सीमा पर नियंत्रण का मौका था। जम्मू के राजा गुलाब सिंह ने खुद को स्वतंत्र घोषित कर दिया।

१९४७ तक जम्मू और कश्मीर पर डोगरा शासकों का शासन रहा। राज भले ही हिन्दू राजाओं का आ गया था मगर ज्यादातर प्रजा मुसलमान हो चुकी थी। ■

-मयूर विहार, नई दिल्ली

विज्ञापन

विज्ञापन

कश्मीर का भूगोल

आधे से अधिक कश्मीर पाक-चीन के कब्जे में

मेघराज खत्री
पूर्व महाप्रबंधक
एस.बी.बी.जे.

भौगोलिक दृष्टि से कश्मीर मूल रूप से भारतीय उपमहाद्वीप का उत्तरी छोर है। विस्तार की दृष्टि से इसमें भारत के जम्मू-कश्मीर राज्य तथा लद्दाख के अलावा पाकिस्तान के अनधिकृत कब्जे वाले कश्मीर, गिलगित-बाल्टिस्तान तथा चीन के अनधिकृत कब्जे वाला अक्साइचिन तथा काराकोरम पार का क्षेत्र (पाकिस्तान द्वारा १९६३ में चीन को सौंपा गया क्षेत्र) इसमें शामिल है। इस पूरे भूभाग का विस्तार लगभग सवा दो लाख वर्ग किलोमीटर है। वर्तमान नियन्त्रण के आधार पर इस क्षेत्र का विवरण इस प्रकार है :

भारत नियन्त्रित

जम्मू	-२७,०००वर्गकि.मी.(१० जिले)
कश्मीर	-१५,०००वर्ग कि.मी.(१० जिले)
लद्दाख	-५९,००० वर्ग कि.मी.(२ जिले)
कुल	-१,०१,००० वर्ग कि.मी.

पाकिस्तान नियंत्रित

गिलगित-बाल्टिस्तान	-७३,००० वर्ग किमी.
गुलाम कश्मीर	-१३,३०० वर्ग किमी.
कुल	-८६,३००वर्ग कि.मी.

चीन नियंत्रित

अक्साई चिन	-३८,००० वर्ग किमी.,
शक्सगाम घाटी	-७,००० वर्ग किमी.
(काराकोरम के उत्तर में)	
कुल	-४५,००० वर्ग किमी.

पाक तथा चीन द्वारा अनधिकृत रूप से कब्जाए क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के बारे में संक्षित विवरण नीचे प्रस्तुत है:-

पाकिस्तान ने अपने अधिकृत कब्जे वाले कश्मीर को दो भागों कश्मीर तथा गिलगित-बाल्टिस्तान में बांटा हुआ है।

गिलगित-बाल्टिस्तान - १९४७ के भारत विभाजन के समय गिलगित-बाल्टिस्तान का क्षेत्र जम्मू-कश्मीर का हिस्सा था, जिसे महाराज ने ६०वर्ष की लीज पर अंग्रेजों को दे रखा था। विभाजन के समय डोगरा राजा हरिसिंह जी ने अंग्रेजों के साथ अपनी लीज डीड को रद्द कर उस क्षेत्र में अपना अधिकार कायम कर लिया।

२६ अक्तूबर १९४७ को महाराजा हरिसिंह ने जम्मू-कश्मीर रियासत के भारत में विलय को मंजूरी दी। लेकिन गिलगित स्काउट्स के कमांडर मिर्जा हसन खान ने महाराजा के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और १ नवम्बर १९४७ को गिलगित-बाल्टिस्तान की आजादी की घोषणा कर दी। इस घोषणा के २१ दिन बाद ही पाकिस्तान ने इस क्षेत्र पर हमला कर अनधिकृत कब्जा जमा लिया। अप्रेल १९४९ तक गिलगित-बाल्टिस्तान पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर का हिस्सा माना जाता था, लेकिन २८ अप्रेल १९४९ को पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर की सरकार के साथ एक समझौते (कराची समझौता) के तहत इस क्षेत्र का नियंत्रण पाकिस्तान की केन्द्र सरकार के अधीन कर दिया गया। २०१८ के एक अध्यादेश द्वारा गिलगित-बाल्टिस्तान के संवैधानिक, न्यायिक अधिकार पाकिस्तानी प्रधानमंत्री को दिये गये हैं। इसके बाद पाकिस्तानी प्रधानमंत्री गिलगित-बाल्टिस्तान के किसी भी वर्तमान कानून में बदलाव कर सकते हैं, कोई नया कानून यहां लागू कर सकते हैं।

इन प्रशासनिक व्यवस्थाओं के बदलाव से क्षेत्र की स्वायत्तता निष्प्रभावी हो गई है और पाकिस्तान की केन्द्र सरकार को इस क्षेत्र के जनसंख्या संतुलन को बदलने तथा सामारिक महत्व के इस क्षेत्र में अपने मित्र चीन की पहुँच (प्रभुत्व) बढ़ाने में सहायता करना है।

अधिकांश क्षेत्र पहाड़ी होने से यह क्षेत्र सैन्य तथा सुरक्षा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। १९९९ का कारगिल दुस्साहस पाकिस्तान ने इसी क्षेत्र से किया

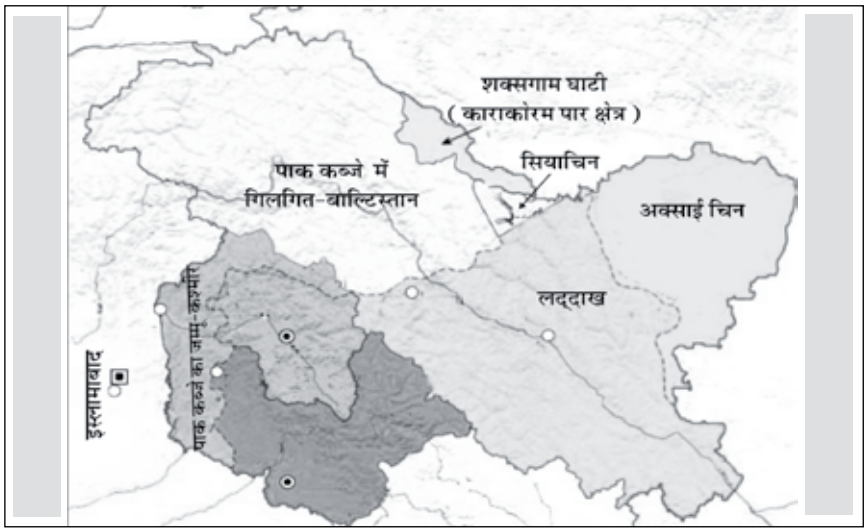

था। विश्व की दूसरी सबसे ऊँची चोटी **के-२** सहित विश्व की सबसे ऊँची चोटियों में से ८ यहीं स्थित हैं।

इसके उत्तर में चीन का शिनजियांग प्रांत और अफगानिस्तान, पश्चिम में खैबर पख्तूनख्वा प्रांत (जैश-ए-मोहम्मद के बालाकोट अड्डों के लिए चर्चित) तथा दक्षिण और पूर्व में भारत है। चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा इसी क्षेत्र से गुजरता है और यह चीन की **वन बेल्ट-वन रोड** परियोजना का हिस्सा है। चीन इस क्षेत्र में सोने, यूरोनियम जैसे दुर्लभ और बहुमूल्य खनिज और पनबिजली संसाधनों के दोहन के लिए भारी निवेश कर रहा है। पनबिजली परियोजनाओं में ७००० मेगावाट के बांध का निर्माण अस्तोर जिले के बुंजी पर चीनी कम्पनी द्वारा किया जा रहा है।

पाकिस्तान और चीन से जुड़े होने के कारण यह क्षेत्र भारत की सुरक्षा की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। चीन ने ६० के दशक में गिलगित-बाल्टिस्तान होते हुए काराकोरम राजमार्ग बनाया जो गिलगित-इस्लामाबाद को भी जोड़ता है। इसी राजमार्ग को बढ़ाते हुए पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह (बलूचिस्तान प्रांत) से चीन के उत्तरी पश्चिमी शिनजियांग प्रांत के काशगर के बीच लगभग २५००-३००० किमी लम्बा सड़क मार्ग बन रहा है जो आर्थिक गलियारे के रूप में भी चीन के लिए उपयोगी होगा। आर्थिक पक्ष के अलावा यह राजमार्ग चीन की सिंधु सागर-हिंद महासागर तक सीधी पहुँच भी बनाएगा, जिससे उसे सामरिक, भू-राजनीतिक तथा रणनीतिक लाभ मिलेगा। हिंद महासागर के शक्ति संतुलन में इस परिवर्तन का भारत की सुरक्षा पर विपरीत प्रभाव पड़ना भी अवश्यम्भावी है।

कश्मीर (मीरपुर-मुजफ्फराबाद)- पाकिस्तान के अवैध कब्जे वाला कश्मीर उत्तर में गिलगित-बाल्टिस्तान सीमा से लगता हुआ है। इसके दक्षिण में पाकिस्तान का पंजाब प्रांत, पश्चिम में खैबर पख्तूनख्वा तथा पूर्व में भारत हैं। इसका क्षेत्रफल लगभग १३३०० वर्ग किमी है। इसकी राजधानी मुजफ्फराबाद है। अक्तूबर १९४७ में पाकिस्तानी सेना तथा पश्तून कबाइलियों ने जम्मू-कश्मीर पर आक्रमण किया और मुजफ्फराबाद, बारामूला पर कब्जा कर लिया।

मीरपुर (दक्षिण कश्मीर) जम्मू कश्मीर रियासत का एक हिंदू बहुल शहर था। यहाँ ४०,००० से अधिक आबादी हिन्दू (केसधारी और मोने दोनों) निवास करती थी जिसमें विभाजन के समय पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त से आए हजारों हिन्दू भी थे ।

पाकिस्तानी सेना तथा आई एस आई ने इस क्षेत्र में अग्रिम चौकियां स्थापित की हुई है। उनके पाले हुए आतंकवादियों ने इस क्षेत्र में आतंकवादियों के प्रशिक्षण शिविर और उन्हें भारत में भेजने के लिए लांचिंग पैड स्थापित किये हुए हैं। इस क्षेत्र की कठिन भौगोलिक स्थिति तथा पाक सैनिकों के समर्थन (निरन्तर गोलाबारी) से आतंकवादियों की भारत में घुसपैठ को रोकना सुरक्षा बलों के लिए वास्तव में चुनौती है। यह भी सही है कि भारत में भी कश्मीर राज्य की सरकारें, अलगाववादी तथा घाटी के नागरिक इन्हें आश्रय तथा नैतिक समर्थन देते रहे हैं। **मात्र कहने के लिए यह क्षेत्र स्वायत्त या स्वतंत्र है। वास्तविकता यह है कि यहाँ सेना तथा आतंकवादियों का ही शासन है, जिनका एक मात्र लक्ष्य भारत को हानि पहुँचाना है।**

चीन नियंत्रित क्षेत्र-अक्साई चिन-भारत, पाकिस्तान तथा चीन के संयोजन में तिब्बती पठार के उत्तर-पश्चिम में स्थित क्षेत्र अक्साई चिन है। ऐतिहासिक रूप से अक्साई चिन भारत को रेशम मार्ग से जोड़ने का जरिया था। भारत हजारों वर्षों से मध्य एशिया के पूर्वी इलाकों (तुर्कमेनिस्तान) और भारत के मध्य संस्कृति, भाषा और व्यापार का मार्ग रहा है। भारत से तुर्कमेनिस्तान का व्यापार मार्ग लद्दाख और अक्साई चिन के रास्ते होते हुए काशगर शहर (शिनजियांग प्रांत चीन) जाया करता था। यह क्षेत्र जम्मू कश्मीर रियासत का हिस्सा था, लेकिन १९६० के दशक में चीन द्वारा इस क्षेत्र पर अनधिकृत कब्जा कर लिया गया। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह ३८००० वर्ग किमी क्षेत्र जम्मू-कश्मीर रियासत के कुल क्षेत्र का २०%से थोड़ा कम है। यह क्षेत्र बहुत ऊँचाई (लगभग ५००० मीटर) पर स्थित श्वेत मरुस्थल है।

अफसोस इस बात का है कि संसद में चीन द्वारा इस क्षेत्र पर कब्जे के सवाल

पर बेशर्मी से उत्तर देते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि उस क्षेत्र का क्या है, वहां तो घास का एक तिनका भी नहीं उगता।

शक्सगाम घाटी (काराकोरम-पार क्षेत्र)- शक्सगाम घाटी (वादी) लगभग ७००० वर्ग किमी का क्षेत्र है,जो कश्मीर के उत्तरी काराकोरम पर्वतों में शक्सगाम नदी के दोनों ओर फैला हुआ है और प्राकृतिक सौंदर्य में स्विट्जरलैंण्ड से भी ज्यादा खूबसूरत है। १९६३ के एक सीमा समझौते के अन्तर्गत पाकिस्तान ने इस क्षेत्र को चीन को भेंट कर दिया।

सियाचीन ग्लेशियर तथा वास्तविक नियंत्रण रेखा के पास स्थित होने से इस क्षेत्र का भौगोलिक, रणनीतिक तथा सैनिक महत्व अधिक है। एक समाचार पत्र की रिपोर्ट के अनुसार गत वर्ष यह पाया गया कि चीन इस क्षेत्र में सड़क निर्माण कर रहा है, जो सीमाई क्षेत्र में चीन की विस्तारवादी नीति का प्रमाण है। रिपोर्ट में यह भी जानकारी दी गई कि चीन पाक अधिकृत कश्मीर में सैन्य ठिकानों के आसपास सड़क निर्माण कर रहा है। यहां सड़क निर्माण से भारत के साथ सटी सीमा तक चीनी सेना की पहुँच और आसान हो जाएगी। रिपोर्ट में गूगल अर्थ इमेजेज के हवाले से बताया कि चीन की दो नई पोस्ट और निर्माण कैंपों को भी वहाँ देखा गया है। ■

-गोल्डन डोम्स, जगतपुरा, जयपुर

विज्ञापन

विज्ञापन

कश्मीर का कड़वा सच

जम्मू-कश्मीर का विलय पूर्ण और बिना किसी शर्त के था

मेहरचन्द महाजन

पूर्व मुख्य न्यायाधीश एवं
दीवान-जम्मू-कश्मीर

न्यायमूर्ति श्री मेहरचन्द महाजन सरदार पटेल के कहने पर जम्मू-कश्मीर रियासत के प्रधानमंत्री (दीवान) बने थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय रामचन्द्र काक महाराजा हरिसिंह का दीवान था और वह जम्मू-कश्मीर को पाकिस्तान में मिला देने का षड़यंत्र कर रहा था। महाराजा ने काक को जेल में बन्द कर तत्कालीन सरसंघचालक श्री गुरु जी के अनुरोध और सरदार पटेल की सलाह पर न्यायमूर्ति महाजन को नया प्रधानमंत्री बनाया। जम्मू-कश्मीर के भारत में मिल जाने के बाद ४ जनवरी १९५४ को वे भारत के तीसरे मुख्य न्यायाधीश बने और २२ दिसम्बर तक इस पद पर रहे। सन् १९६७ में उनका निधन हो गया।

न्यायमूर्ति महाजन जम्मू-कश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण, रियासत के भारत में विलय आदि घटनाओं के साक्षी थे। इन अनुभवों के आधार पर उन्होंने १९६२ में साप्ताहिक 'पांचजन्य' के लिये एक लेख लिखा था। उसका सार-संक्षेप यहाँ प्रस्तुत है -

पाकिस्तान को इस मामले में कोई भी दखल देने का अधिकार नहीं है। भारतीय स्वाधीनता विधेयक १९४७ के तहत पाकिस्तान कोई भी 'पक्ष' नहीं था। यह मामला जम्मू-कश्मीर राज्य और भारतीय उपनिवेश के बीच था। पाकिस्तान यह दावा नहीं कर सकता था कि विलय का प्रश्न फिर से उठाया जाए और उसका निर्णय संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में 'जनमत' के आधार पर किया जाए।

अक्तूबर, १९४७ में कश्मीर का भारत में विलय 'बिना-शर्त' था। भारतीय स्वाधीनता विधेयक १९४७ में कहीं सशर्त विलय का विधान नहीं है। उस विधेयक में भारत के देशी राजाओं को अपनी स्वेच्छा के अनुसार, भारत व पाकिस्तान में विलय करने का 'पूर्ण' अधिकार था। उपनिवेश के गवर्नर-जनरल को इस 'विलय' को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का अधिकार दिया गया था, परन्तु उसे इस प्रश्न को विचाराधीन रखने या उसके साथ शर्तें जोड़ने का कोई अधिकार नहीं था। भारत सरकार को भी 'सुरक्षा परिषद' की धरती पर खड़े होकर विलय के प्रश्न का पुनर्निर्णय लेने का कोई संवैधानिक अधिकार नहीं था। भारत सरकार ने जो कुछ किया वह भारतीय स्वाधीनता विधेयक १९४७ और दोनों उपनिवेशों के संवैधानिक अधिकार की दृष्टि से पूर्णतः अवैध था या अधिकतर बाह्य था।

यह सुरक्षा परिषद के चार्टर के भी 'अधिकार-बाह्य' था। यह परिषद कोई त्रिकोणीय न्यायाधिकरण (ट्राइब्यूनल) नहीं था कि जहां सुविधानुसार या राजनीतिक दबावों के तहत लेन-देन के समझौते अभिलिखित किए जा सकें और क्रियान्वित किए जा सकें। भारत का नया विधान भी भारत सरकार को कोई अधिकार नहीं देता कि जम्मू-कश्मीर राज्य के भाग्य का फैसला करने के लिए कोई समझौता करे। भारत के द्वारा उठाए गए मामले के संदर्भ में जम्मू-कश्मीर राज्य के विलय के प्रश्न का विवेचन करने का भी कोई अधिकार सुरक्षा-परिषद को नहीं था। वह भारत की तथाकथित वचन-बद्धता का आधार लेकर निर्णय से किनारा नहीं कर सकती थी। **उसे**

सिर्फ यह फैसला करना था कि पाकिस्तान हमलावर है या नहीं।

पाकिस्तान कोई पक्ष नहीं

अतः पाकिस्तान को इस मामले में कोई भी दखल देने का अधिकार नहीं है। भारतीय स्वाधीनता विधेयक १९४७ के तहत पाकिस्तान कोई भी 'पक्ष' नहीं था। यह मामला जम्मू-कश्मीर राज्य और भारतीय उपनिवेश के बीच था। पाकिस्तान यह दावा नहीं कर सकता था कि विलय का प्रश्न फिर से उठाया जाए और उसका निर्णय संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में 'जनमत' के आधार पर किया जाए। कारण यह कि पाकिस्तान पहले भी जनता की इच्छाओं की उपेक्षा करके, महाराजा पर दबाव डालकर पाकिस्तान में विलय का प्रयत्न कर चुका था। उसने एक सुसंगठित सशस्त्र आक्रमण कश्मीर पर कराया, उसके एक भाग पर जबरन कब्जा किया और आज भी उस पर जमा हुआ है।

जिन्ना की योजनाओं के अनुसार कश्मीर उसका होना था। वह उसे अपनी जेब में रखा हुआ सा मानता था, चाहे वह मर्जी से शामिल हो या जबर्दस्ती से। अंग्रेजों ने उससे यह वायदा किया भी था। वह मुस्लिम-बहुसंख्यक क्षेत्र था और उसमें जाने के लिए रास्ता भी तो पाकिस्तान के भीतर से ही था। सभी सड़कें, डाक-व्यवस्था और दूरभाष सम्पर्क पाकिस्तान के जरिये ही थे। अपनी भूमिका के प्रति पूर्ण आत्म-विश्वास के साथ जिन्ना ने महाराजा से पहले तो बड़े अनुरोध और मैत्री की शैली में अपना राज्य पाकिस्तान में मिलाने का आग्रह किया।

जम्मू-कश्मीर का तत्कालीन प्रधानमंत्री काक इतने दिनों से लगातार पाकिस्तानी राजनीतिज्ञों के साथ हम निवाला बना हुआ था और उसने वायदा किया हुआ था कि कश्मीर तश्तरी पर रखा हाजिर होगा।

जिन्ना को इजाजत नहीं मिली

जिन्ना का अंग्रेज सैन्य सचिव तीन बार कायदे आजम के पत्र लेकर महाराजा से मिलने आया। महाराजा को बताया गया कि जिन्ना का स्वास्थ्य ठीक नहीं है और उसे डाक्टरों ने गर्मियां कश्मीर में बिताने की सलाह दी है। असली मकसद था महाराजा को बहला-फुसला कर पाकिस्तान समर्थक तत्वों की मदद से पाकिस्तान में विलय कराना।

अगर और सब कुछ असफल होता, तो महाराजा को गद्दी से उतारा जाना था और राज्य से भगा दिया जाना था। जिन्ना का निजी सचिव पहले भी कश्मीर आया था और वहां कई महीने ठहर कर उसने भारत के विरुद्ध एक सांप्रदायिक-विद्वेष का वातावरण फैलाया था। सांप्रदायिक प्रवृत्तियों और मुल्लाओं को भड़काया गया और महाराजा पर दबाव डालने के लिए कहा गया था कि कश्मीर पाकिस्तान में विलय कर दें। मनाना-अनुरोध करना असफल रहे, तो .....राज्य पर जबर्दस्ती कब्जा करने के सभी तरीकों की तैयारी पहले से ही बड़ी योजना के साथ की गई थी। उन्हें अंतिम रूप दिया जा रहा था।

> मैंने सख्त रवैया अपनाया और कहा, 'फौज दीजिए, विलय कीजिए, लोक प्रिय पार्टी को जो अधिकार चाहते हैं दीजिए, मगर फौज आज शाम ही हवाई जहाज से जानी चाहिए। वरना मैं चला जाऊंगा और मिस्टर जिन्ना से शर्तें तय करूंगा, क्योंकि शहर को जरूर बचाना होगा।' इस पर प्रधानमंत्री नेहरू एक दम क्रुद्ध हो गए और उन्होंने अपने गरम स्वभाव का पूरा प्रदर्शन करते हुए चिल्ला कर कहा 'गैट आउट'।

मगर, भले ही काफी दबाव रहा हो, महाराज ने जिन्ना के वायदों को शब्दशः नहीं लिया। उन्होंने नम्रतापूर्वक जिन्ना को श्रीनगर में गर्मियां बिताने का निमंत्रण देने से इन्कार कर दिया। इससे जिन्ना काफी नाराज हुए।

भारत की उदासीनता

जहां तक भारत का संबंध है, वह इस विषय में उदासीन था। अगर महाराजा १५ अगस्त १९४७ से पहले भारत में या पाकिस्तान में विलय करने का फैसला ले चुके होते तो सारी गड़बड़ और कटुता से बचा जा सकता था। परन्तु वह अपने उद्देश्य के बारे में बड़े ढुलमुल रहे। व्यक्तिगत रूप से वे पाकिस्तान में विलय के विरुद्ध थे। वे पाकिस्तान में जो कुछ हिन्दू जनता के साथ हो रहा था उससे अपनी आंखे बंद नहीं कर सकते थे। वे यह नहीं भुला सकते थे कि प्रत्येक हिन्दू से संपत्ति लूटी गई है और लगभग सारी हिन्दू आबादी का कत्लेआम कर दिया गया है। वे अपनी रियासत में इन्हीं दृश्यों का पुनरावर्तन नहीं देखना चाहते थे।

मेरे प्रधानमंत्री पद ग्रहण करने से एक महीने पहले से ही, शक्ति-प्रदर्शन के द्वारा महाराजा को अपना राज्य पाकिस्तान में विलय करने के लिए विवश करने की प्रक्रिया का दबाव आरंभ हो चुका था। वास्तविक शक्ति के प्रयोग की पूरी योजना बन चुकी थी और उसको अमली जामा पहनाने की सलाह दी जा चुकी थी। उप-प्रधानमंत्री रामवाल बत्रा की मदद से जनरल जनक सिंह प्रधानमंत्री का काम चला रहे थे। काक घर में कैद थे। शेख अब्दुल्ला और उसके वफादार सहायक बख्शी गुलाम मुहम्मद के नेतृत्व वाली नेशनल कान्फ्रेंस ही

राज्य भर में एक मात्र जागरूक राजनीतिक पार्टी थी। परन्तु इस पार्टी की कोई नीति नहीं थी। उसमें कुछ सांप्रदायिक प्रवृत्तियों के धर्मांध लोग थे, जिन्हें जनता के हित के बजाय अपने हित या अधिक से अधिक अपने महजब के हित की फिक्र थी।

महात्मा गाँधी से मिला

जब १५ अक्तूबर १९४७ को मुझे प्रधानमंत्री की शपथ दिलाई गई तो यह थी राज्य की परिस्थिति। ऐसे झगड़ों वाले मामले में उलझने की मुझे कोई तमन्ना नहीं थी, परन्तु महाराजा, महारानी और नवयुवा युवराज के अत्यावश्यक पत्र ने मुझे छलांग लगाने को विवश कर दिया। कश्मीर राज्य की सरकार की जिम्मेदारियां संभालने से पहले मैं भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउंटबैटन से मिला। उनके साथ एक घंटे की बात में मैंने निष्कर्ष निकाला कि वह समझते थे कि राज्य की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए, महाराजा के सामने पाकिस्तान के साथ विलय करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

जहां तक भारतीय नेताओं का प्रश्न था वे लोग राज्य के भारत में विलय के बारे में कुछ न कुछ उदासीन थे या कम से कम बहुत उत्सुक नहीं थे। महात्मा गांधी ने कृपा करके मुझे एक व्यक्तिगत साक्षात्कार का अवसर दिया था। मैंने उनसे पूछा ''**क्या मैं महाराजा को राज्य का भारत में विलय करने की सलाह दूं और उन्हें मनाऊं। उन्होंने कहा था, कोई जल्दी नहीं है। स्थिति का अध्ययन करो और उन्हें वही सलाह दो जो तुम सर्वोत्तम समझते हो।**'' पण्डित नेहरू का विलय की अपेक्षा महाराजा द्वारा शेख अब्दुल्ला को सत्ता हस्तांतरण के विषय में अधिक आग्रह था।

मेजर शाह की धमकियां

मैंने प्रधानमंत्री के रूप में पद ग्रहण किया भी नहीं था कि मुझे पता चला कि महाराजा के ऊपर बेहद दबाव डाल कर पाकिस्तान के साथ विलय करने को विवश करने की प्रक्रिया पहले से ही चालू थी। एक बड़ी प्रभावी आर्थिक नाकेबंदी-आरंभ हो चुकी थी और किसी प्रकार की कोई भी वस्तु राज्य में आने पर पूरी बंदिश थी। उद्देश्य था जनता को भूखा मार कर विद्रोह के लिए भड़काना। लाहौर के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश के दामाद मेजर शाह, जो पाकिस्तान के महत्वपूर्ण सचिवों में से एक थे, इस समय श्रीनगर में थे और वे एक हाथ में चाबुक तथा तलवार और दूसरे में विलय-पत्र लिए घूम रहे थे। वे जनरल जनक सिंह और उप-प्रधानमंत्री बत्रा पर दबाव डाल रहे थे कि वे महाराजा को पाकिस्तान के साथ विलय की सलाह दें। अब तक वे सफल नहीं हुए थे।

नेशनल कान्फ्रेंस ही राज्य भर में एक-मात्र राजनीतिक पार्टी थी। परन्तु इस पार्टी की कोई नीति नहीं थी। उसमें कुछ सांम्प्रदायिक प्रवृत्तियों को धर्मांध लोग थे, जिन्हें जनता के हित के बजाय अपने हित या अधिक से अधिक अपने मजहब के हित में फिक्र थी।

यह सुनते ही कि मैंने पद ग्रहण कर लिया है, उसने मेरे साथ मुलाकात का आग्रह किया। मैने उसे मुलाकात का मौका दिया और वह दो घंटे चली।

जब मैंने देखा कि वह तो एक प्रकार का अल्टिमेटम सा ही लेकर आया है, तो मैंने कहा, 'अगर तुम अपनी नाकेबंदी हटा लो और खाद्य सामग्री, कपड़ा तथा पेट्रोल राज्य में आने दो, तो मैं विस्तार से इस मामले में तुम्हारे साथ बात करूंगा।' उसने जिन्ना से अनुरोध करके नाकेबंदी हटाने की बात मान ली। इसका कोई अनुकूल उत्तर नहीं मिला तो फिर वह मुझसे दुबारा मिला और बोला 'मिस्टर जिन्ना लाहौर आने का आपको निमंत्रण देते हैं। वहां जाकर उनसे बात कर लें।'

मेरा जिन्ना साहब के दरबार में हाजिर होने का कोई मूड नहीं था। मैं पाकिस्तानी हाथों में पड़ कर अपनी मौत बुलाने वाला नहीं था। मैंने निमंत्रण अस्वीकार कर दिया।

आर्थिक नाकेबंदी

अविभाजित भारत के साथ कश्मीर का यातायात दो सड़कों से होकर था। एक रावलपिंडी रेल से शुरू करके कोहाला होकर कश्मीर घाटी में प्रवेश और दूसरा स्यालकोट से जम्मू तक रेल से और वहां से बनिहाल दर्रे को पार करके कश्मीर घाटी में। स्यालकोट और रावलपिंडी दोनों ही विभाजन के बाद पाकिस्तान राज्य के हिस्से में आए थे और इसके परिणामस्वरूप किसी भी प्रकार का कोई माल, जब तक पाकिस्तान सरकार की इजाजत न हो, रेल या सड़क से जम्मू या कश्मीर नहीं पहुंच सकता था।

नाकेबंदी के अलावा, पाकिस्तानी एजेंट जी-जान से रियासत के अंदर सांप्रदायिक फसाद फैलाने की कोशिशें कर रहे थे जैसा कि उन्होंने भारत में आने से पूर्व और उसके बाद किया था। जम्मू प्रदेश के मुसलमानों को सांप्रदायिक झगड़े करने के लिए भड़काया गया। जम्मू सांप्रदायिक हत्याओं का केन्द्र बन गया। जम्मू की सीमा पर स्थित गांवों में सांप्रदायिक आक्रमणों की योजना भारत की पूरी २५० मील लंबी सीमा के लिए बनाई गई। पाकिस्तानी सेना से हथियार और गोला बारूद प्राप्त करके पाकिस्तानी जिहादियों ने सीमा के सहारे सारे हिन्दू गांवों पर आक्रमण किया। गांव जला दिए गए, सारा सामान लूट लिया गया और

लोगों को मार दिया गया। जैसे ही जम्मू के गवर्नर से मुझे इन हमलों का पता चला, मैंने सीमा का दौरा करने का निश्चय किया और तुरंत श्रीनगर से जम्मू पहुंचा। महाराज ने भी मेरे साथ चलने का आग्रह किया।

अमानवीय दृश्य

हमने सीमा पर जो देखा वह अमानवीय हत्याओं और निर्दयता से भरा था। पाकिस्तानियों ने मनुष्यों जैसा नहीं राक्षसों और जानवरों जैसा व्यवहार किया था। सर्वत्र सर्वनाश दिखाई दे रहा था। हमने लाशें एकत्र कराईं और उनका दाह-संस्कार कराया। सबका सब एक तरफा आक्रमण और क्रूरता का कृत्य था। सीमावासी हिन्दू शरणार्थी शिविरों की ओर भाग रहे थे और अपनी औरतों और बचे-खुचे सामान को लेकर सड़क पर दिखाई दे रहे थे। सीमा पर पहरा देती हुई डोगरा-फौजें इन हमलों को रोकने में सहायता कर रही थीं। परन्तु सीमा की लंबाई देखते हुए उनकी संख्या बहुत कम थी। हमने वहां शान्ति और व्यवस्था के लिए जितना कुछ संभव था किया।

यह भी भाग्य की विडंबना है कि जिन लोगों ने जबर्दस्ती विलय कराने के लिए ऐसे हमलों की योजनाएं बनाई थीं, वे ही लोग आज कश्मीरी जनता के सरंक्षक होने का दावा करते हुए सुरक्षा परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के न्यायालय के सामने उनके लिए न्याय और सुरक्षा हेतु तर्क बरसा रहे हैं।

आरंभिक हमला

महाराजा को मजबूर करने, उन्हें पकड़ ताकत के बल पर रियासत पर कब्जा करने में असफल होने के बाद पाक-हुक्मरानों का अगला कदम था सीधे हमले की योजना। इस हमले की खबर महाराजा साहब को एक महीने पहले ही मिल गई थी। खबर स्वामिभक्त मित्र ने दी थी जो सरहद से महाराजा को सचेत करने के लिए आया था। मगर महाराजा के एक पठान दोस्त ने, जो महल में ही रहता था, बताया कि यह सिर्फ उन पर दबाव डालने के लिए शीत युद्ध है।

महाराजा साहब को यह पता नहीं था कि उनके अंग्रेज कमांडर-इन-चीफ ने उनकी सेना को ऐसा बिखेर कर तैनात कर दिया है कि सरहद की तरफ से कोई हमला हो गया तो वह उसका प्रभावी ढंग से सामना नहीं कर पाएगी। सात शक्तिशाली बटालियनें दूर-दूर इलाकों में फैली हुई थीं। सिर्फ एक बटालियन सीमा पर थी मगर इस बटालियन में अधिकांश मुसलमान थे, जिनकी वफादारी पाकिस्तान ने जीत ली थी।

यह भी भाग्य की विडंबना है कि जिन लोगों ने जबर्दस्ती विलय कराने के लिए ऐसे हमलों की योजनाएं बनाई थीं, वे ही लोग आज कश्मीरी जनता के सरंक्षक होने का दावा करते हुए सुरक्षा परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के न्यायालय के सामने उनके लिए न्याय और सुरक्षा हेतु तर्क बरसा रहे हैं।

हमला २४ अक्तूबर को हुआ था। जब हमला हो रहा था तो महाराजा साहब और मैं मुजफ्फराबाद के ऊपर उड़ रहे थे, मगर बादलों के कारण हम कुछ देख नहीं पाए। हमें खबर अड्डे पर उतरने बाद ही मिली और तब जितनी सैनिक सहायता जहां से हो सकती थी हमने भेजी। यह बेवजह जुल्म का हमला था, महाराजा की तरफ कोई मौका नहीं दिया गया था। मकसद था रियासत पर कब्जा करना।

शेख भागा

दो चिंतापूर्ण व्यग्रता भरे दिन २४ और २५अक्तूबर के बीते, मगर हमारे पत्रों का विलय के प्रस्ताव का कोई उत्तर भारत, ब्रिटेन कहीं से भी नहीं आया। सारा श्रीनगर और रियासत भयंकर संकट में थी, और हर कोई अपने प्राण बचाने के लिए यहां-वहां भाग रहा था। शेख अब्दुल्ला चुपके से हवाई जहाज से २५ अक्तूबर की शाम को दिल्ली रवाना हो गए थे।

इन हमलों की श्रृंखला का शिखर तब आ पहुंचा जब मि. जिन्ना ने श्रीनगर में ईद का जश्न मनाने का ऐलान किया।

सौभाग्य से ठीक बड़े मौके की घड़ी में अचानक श्री वी.पी. मेनन एक हवाई जहाज में आए। विलय का एक दस्तावेज तैयार किया गया और महाराज ने उस पर दस्तखत किए। श्री वी.पी. मेनन ने महाराजा को जम्मू चले जाने की सलाह दी ताकि वे सलाह-मशविरा के लिए आसानी से वहां मौजूद मिल सकें। शेख अब्दुल्ला पहले ही से दिल्ली में भारत के प्रधानमंत्री के पास थे। मुझे भी विलय के प्रश्न पर तथा सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिए बात करने के लिए मेनन के ही साथ दिल्ली जाने के लिए कहा गया। मैं उनके साथ भारत के लिए रवाना हुआ और २६ तारीख की सुबह हम लोग प्रधानमंत्री नेहरू से मिले और उन्हें रियासत की गंभीर तथा संकटग्रस्त हालत की जानकारी दी। मैंने सैनिक सहायता मांगी और कहा कि फौज को तुरन्त ही हवाई जहाज से भेजना चाहिए वरना श्रीनगर का पूरा शहर और हम जो कुछ भी अनमोल समझते हैं, वह सब नष्ट हो जाएगा।

मुझे आश्वासन दिया गया कि अगर श्रीनगर पाकिस्तानी हाथों में चला भी गया, तो उसे वापिस ले लिया जाएगा। इसका मेरे ऊपर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा और मैंने सख्त रवैया अपनाया और कहा, *''फौज दीजिए, विलय कीजिए, लोक प्रिय पार्टी को जो अधिकार चाहते हैं दीजिए, मगर फौज आज शाम ही हवाई जहाज से जानी चाहिए। वरना मैं चला जाऊंगा और मिस्टर*

जिन्ना से शर्तें तय करूंगा, क्योंकि शहर को जरूर बचाना होगा।'' इस पर प्रधानमंत्री नेहरू एक दम क्रुद्ध हो गए और उन्होंने अपने गरम स्वाभाव का पूरा प्रदर्शन करते हुए चिल्ला कर कहा 'गेट आऊट' (बाहर निकल जाओ)।

जैसे ही मैं उठ रहा था, एक घटना घटी जिसने मुझे और कश्मीर को पाकिस्तान के हाथों में जाने से बचा लिया। शेख अब्दुल्ला जो प्रधानमंत्री की कोठी पर ही ठहरे हुए थे, हमारी बातें पीछे से सुन रहे थे। संकटपूर्ण स्थिति समझ कर, उन्होंने प्रधानमंत्री के पास एक पर्ची भेजी। प्रधानमंत्री ने उसे पढ़ा और बोले कि 'आप जो कह रहे थे, वही मत शेख साहब का भी है।' और बस उनका पूरा रवैया ही बिल्कुल बदल गया।

खोटी नियत

शेख अब्दुल्ला इस बात के लिए उत्सुक थे कि सत्ता उनके हाथों में आए और महाराजा सिर्फ संवैधानिक राज-प्रमुख ही बने रहें। २६ तारीख की सुबह के इस समझौते का परिणाम यह हुआ कि अंत में मेरी लगातार प्रार्थना मानकर भारतीय मंत्रिमण्डल ने रियासत का विलय स्वीकार कर लिया और उसे बचाने के लिए २७ अक्तूबर की सुबह फौजें भेजना तय कर लिया। महाराजा के विलय-प्रस्ताव को स्वीकार करके और उनके इस प्रस्ताव पर विचार करके कि वे सत्ता शेख अब्दुल्ला को सौंपने को तैयार हैं, भारत ने कश्मीर की सुरक्षा का दायित्व ग्रहण कर लिया।

कहीं से आजाद नहीं

अगर भारत २४ तारीख को ही, प्रार्थना मानकर, सैनिक भेज देता, तो बारामूला भी उस दुर्भाग्य और विनाश से बच जाता जो उसे भोगना पड़ा। भारत के गवर्नर जनरल माउण्टबेटन विलय के लिए उत्सुक नहीं थे। जैसा मैंने ऊपर कहा है, उनका ख्याल था कि उनकी समझ में महाराजा के लिए पाकिस्तान में विलय करना ही अधिक सुविधाजनक था। भारत हमलावरों को श्रीनगर से उरी तक भगाने में सफल रहा परन्तु बाकी रियासत पाकिस्तान के हुक्मरानों के कब्जे में आ गई, जिसका बनावटी नाम आजाद कश्मीर रखा। वह तो हमलावर की एड़ी के नीचे दबा हुआ है।

> सच है कि हमारे प्रधानमंत्री और लोकप्रिय प्रधानमंत्री ने छतों पर चढ़कर बिना ध्यानपूर्वक संवैधानिक स्थिति का अध्ययन किए घोषणाएं की है कि विलय का प्रश्न अंतिम रूप से जनमत-संग्रह के द्वारा ही होगा। मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि भारत इस प्रकार की घोषणाओं का पालन करने को कोई बंधन जिम्मेदारी नहीं है।

विलय का दस्तावेज कश्मीर द्वारा भारत को दिया गया उत्तराधिकार पत्र है और उस दस्तावेज के ऊपर विश्वास के आधार पर करोड़ों भारतीय कर-दाताओं का धन रियासत की सुरक्षा और विकास में खर्च हुआ है। भारत के किसी भी राजनीतिज्ञ को अधिकार या अर्हता प्राप्त नहीं थी कि वह सारा धन खर्च करे, यदि उसे जरा सा भी शक इस उत्तराधिकार-पत्र पर था या वह समझता था कि विलय का निर्णय अंतिम और अपरिवर्तनीय नहीं है।

विलय शर्तों-सहित नहीं

भारतीय स्वाधीनता विधेयक में सशर्त-विलय का कोई प्रावधान नहीं था। उसमें ऐसी किसी स्थिति की कल्पना नहीं थी, क्योंकि अन्यथा वह संसद की नीति के बाहर की बात होगी। वह किसी हिन्दुस्थानी रियासत को असमंजस की स्थिति में नहीं रखना चाहती थी। उसने हिन्दुस्थान की रियासतों के राजाओं को दोनों राज्यों में से किसी के साथ विलय करने का पूरा-पूरा स्वेच्छया अधिकार दिया था। राज्य के गवर्नर जनरल को यह अधिकार तो था कि इस प्रस्ताव को स्वीकार करे या अस्वीकार करे, परन्तु उस प्रश्न को लटकाए रखने या उसके साथ शर्तें जोड़ने का अधिकार नहीं था, क्योंकि विलय की प्रक्रिया पूर्ण होते ही सरकार पर उस विलीन रियासत की सारी सुरक्षा, यातायात और विदेश नीति का दायित्व आ जाता था।

यह विलय सुरक्षा परिषद चार्टर के क्षेत्र के भी अधिकार-बाह्य है। वह कोई पंच (ट्राइब्यूनल) नहीं है, जहां देशों के बीच लेन-देन के सौदे और समझौते सुविधाओं और राजनीतिक दृष्टिकोणों के आधार पर किए जाएं। भारतीय संविधान भी, जो १९४९ में स्वीकार किया गया और २६ जन. १९५० को लागू हुआ, भारत सरकार को कोई अधिकार नहीं देता कि पाकिस्तान के साथ कश्मीर रियासत के संबंध में कोई समझौता करे।

यह सच है कि हमारे महान और लोकप्रिय प्रधानमंत्री पं. नेहरु ने छतों पर चढ़कर बिना ध्यानपूर्वक संवैधानिक स्थिति का अध्ययन किए घोषणा की है कि विलय का प्रश्न अंतिम रूप से जनमत-संग्रह के द्वारा ही होगा। मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि भारत पर इस प्रकार की घोषणाओं का पालन करने का कोई बंधन या जिम्मेदारी नहीं है। ■

विज्ञापन

कश्मीर समस्या की पृष्ठभूमि

समस्याओं की जड़ शेख अब्दुल्ला था

कन्हैया लाल चतुर्वेदी
(पूर्व प्रबंधक-भारतीय रिजर्व बैंक)

शेख अब्दुल्ला ने महाराजा हरिसिंह को इतना प्रताड़ित किया कि उन्हें पद त्याग कर जम्मू जाना पड़ा। उनके स्थान पर युवराज कर्ण सिंह सदरे रियासत बनाये गये

अंग्रेज सरकार ने भारत को आजादी तो दी पर कुटिलता के साथ भारत को टुकड़े-टुकड़े करने का भी पूरा प्रयास किया। तीन टुकड़े तो अंग्रेजों ने तत्कालीन भारतीय नेताओं की सहमति से ही कर दिये। अंग्रेजी शासन के अधीन देशी रियासतों को भी यह छूट दे दी गई कि चाहे तो स्वतंत्र रहें अथवा भारत या पाकिस्तान के साथ रहें। ऐसी देशी रियासतों की संख्या ५८४ थी। इनमें से पाँच बड़ी रियासतों जम्मू-कश्मीर, मैसूर, बड़ौदा, ग्वालियर तथा हैदराबाद का प्रशासन सीधे वायसराय देखते थे। एक प्रकार से ये रियासतें केन्द्र शासित थीं। सभी ५८४ रियासतों में क्षेत्रफल के हिसाब से जम्मू-कश्मीर सबसे बड़ी थी।

स्टेट विभाग का गठन

उक्त ५८४ रियासतों में ५६३ रियासतें भारतीय क्षेत्र में थीं तथा शेष पाकिस्तानी भू-भाग में थीं। इन सभी देसी राज्यों के भारत में विलय के लिये भारत सरकार ने **स्टेट्स डिपार्टमेण्ट** बनाया। इसके सचिव तेज-तर्रार प्रशासनिक अधिकारी **वी.पी.मेनन** बनाये गये। यह विभाग गृह-मंत्रालय के अंतर्गत था, अतः सभी देशी रियासतों के भारत में विलीनीकरण का सीधा दायित्व उप-प्रधानमंत्री तथा गृहमंत्री सरदार पटेल पर था। केवल एक रियासत **जम्मू-कश्मीर** के विलय की जिम्मेदारी प्रधानमंत्री पं.नेहरू ने सरदार पटले से अनुरोध कर अपने पास रखी। यही रियासत एक नासूर बन गया जो सत्तर साल तक पूरे भारत को पीड़ा देता रहा। वास्तव में स्वतंत्रता के बाद का कश्मीर का इतिहास सरकारों की एक के बाद एक की गई भीषण गलतियों का इतिहास है। कश्मीर को समझने के लिये यह इतिहास जानना भी जरूरी है।

२६अक्तूबर १९४७ के दिन जम्मू-कश्मीर के महाराजा **हरिसिंह ने रियासत का बिना किसी शर्त के भारत में पूर्ण विलय कर दिया।** इसके बाद भारतीय सेनाओं ने कश्मीर में कदम रखा तथा कायर पाकिस्तानियों को खदेड़ना शुरु कर दिया। इसी बीच भारत सरकार भोले-पन में मामले को संयुक्त राष्ट्र संघ में ले गई। परिणामस्वरूप युद्ध विराम हो गया और जम्मू-कश्मीर का एक तिहाई से अधिक भू-भाग पाकिस्तान के पास रह गया। यह भू-भाग ही पाक अधिकृत कश्मीर (पीओके) या गुलाम कश्मीर कहलाता है।

शेख प्रधानमंत्री बना

इधर पं.नेहरु ने वही किया जिसका महाराजा हरिसिंह को डर था। विलय के समय प्रधानमंत्री पं.नेहरू ने शर्त रखी कि राज्य के विलय को स्वीकृति तभी दी जायेगी जब महाराजा शेख-अब्दुल्ला को जम्मू-कश्मीर की बागडोर देने का तैयार हों। मरता क्या न करता, महाराजा ने शर्त मान ली और पं.नेहरू के अत्यंत आत्मीय जनाब शेख अब्दुल्ला के हवाले जम्मू-कश्मीर कर

दिया गया। यह ऐसा ही था जैसे बिल्ली को दूध की रखवाली के लिये कहना।

४ मार्च १९४८ को शेख अब्दुल्ला को कश्मीर के प्रधानमंत्री पद की शपथ दिलाई गई। महाराजा हरिसिंह सदरे-रियासत (राज्यपाल) बने। शेख ने महाराजा को इतना प्रताड़ित किया कि ९ जून १९४९ को पदत्याग कर उन्हें जम्मू आना पड़ा। उनके स्थान पर युवराज कर्ण सिंह सदरे-रियासत बनाये गये। इस बीच शेख अब्दुल्ला ने प्रधानमंत्री नेहरू को अपने वाग्जाल में फँसा कर कश्मीर को विशेष दर्जा देने के लिये मना लिया था। इसके लिये भारतीय संविधान में धारा ३७० जोड़ी गई, हालांकि बाबा साहब डा.अम्बेडकर तथा सरदार पटेल इसके विरोध में थे। कांग्रेस कार्यसमिति के अधिकांश सदस्य, मंत्रिमण्डल तथा संविधान सभा के अधिकतर सदस्य भी धारा ३७० के पक्ष में नहीं थे। पं.नेहरू ने इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना कर संविधान में शामिल कराया। २७ नव.१९४९ को भारतीय संविधान स्वीकार कर लिया गया तथा दो माह बाद २६ जन. ५० को पूरे देश में लागू कर दिया गया।

यह नेहरू जी की ही कृपा थी कि धारा ३७० के प्रभावी होने के पहले ही शेख अब्दुल्ला को जम्मू-कश्मीर के **प्रधानमंत्री** के रूप में शपथ दिलाई गई।

दिल्ली समझौता

धारा ३७० के बाद शेख अब्दुल्ला को प्रसन्न करने के लिये १९५२ में भारत सरकार तथा शेख के बीच दिल्ली समझौता और हुआ। एक राष्ट्र-द्रोही को रिश्वत पर रिश्वत दी जा रही थी। दिल्ली समझौते में भारत सरकार ने माना, कि *(क) जम्मू-कश्मीर की संविधान सभा सर्वशक्ति-सम्पन्न रहेगी तथा केन्द्र सरकार अन्य प्रांतों की तरह जम्मू-कश्मीर में अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकेगी।(धारा ३५६ का प्रयोग राज्य में नहीं हो सकेगा)*

(ख) राज्य का नागरिक कौन होगा यह राज्य सरकार तय करेगी। इसी के साथ

वी.पी.मेनन

जम्मू-कश्मीर के सभी नागरिक भारत के नागरिक माने जायेंगे पर भारत के नागरिक राज्य के नागरिक नहीं होंगे।

(ग) भारत के ध्वज के साथ राज्य का झण्डा भी लहराया जायेगा।

(घ) सदरे-रियासत का चुनाव राज्य सरकार ही करेगी।

आई बी को सूचना मिली कि पाकिस्तान का एक दूत शेख अब्दुल्ला से मिलने तन्मर्ग आ रहा है। ८ अगस्त को शेख भी श्रीनगर से तन्मर्ग के लिये रवाना हो गया

सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से राज्य बाहर रहेगा आदि अन्य कुछ और विषय भी दिल्ली समझौते में थे। परमिट लेकर ही अन्य राज्यों के भारत के नागरिकों को प्रवेश मिलेगा यह समझौता भी हुआ।

शेख जेल में डाला गया

अनु.३७० एवं उक्त समझौते को देश के विवेकशील लोग अलगाव-वाद का जनक मान रहे थे। अतः १९५३ के प्रारम्भ में **प्रजा परिषद** ने **एक देश में दो विधान, दो प्रधान और दो निशान** के विरोध में जन-आन्दोलन प्रारम्भ किया। नये बने **भारतीय जनसंघ** ने इस आन्दोलन को पूरा समर्थन दिया। जनसंघ के अध्यक्ष डा.श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने बिना परमिट जम्मू-कश्मीर जाने का निश्चय कर सत्याग्रह किया। उन्हें राज्य सरकार ने बन्दी बना लिया और २३ जून १९५३ को रहस्यपूर्ण परिस्थितियों में उनका निधन हो गया। उस समय वे मात्र ५२ वर्ष के थे। पन्द्रह वर्षों के बाद भारतीय जनसंघ के ही अध्यक्ष पं.दीनदयाल उपाध्याय की भी ५२ वर्ष की आयु में रहस्यमय मृत्यु हो गई।

डा.मुखर्जी के बलिदान से देश में कुछ जागृति आई। इसी के साथ शेख के कश्मीर का सर्वशक्तिमान सुल्तान होने के मंसूबों पर पानी फिर गया। अब उसने पाकिस्तान से सम्पर्क साधा। भारत के खुफिया विभाग की नजरें शेख पर लगी हुईं थी। इंटेलिजेंस ब्यूरो के निदेशक उस समय बी.एन.मलिक थे जो स्वतंत्र भारत के पहले निदेशक संजीवनी पिल्लै के बाद १५ जुलाई १९५० को आई.बी. के प्रमुख (डायरेक्टर) बने थे। उनकी पुस्तक 'माइ इअर्स विद नेहरू' काफी प्रसिद्ध है। इसका प्रथम भाग कश्मीर पर ही है। इसमें उन्होंने लिखा है, कि **जन.१९४९ में दो विदेशी पत्रकारों को दिये साक्षात्कार में शेख ने भविष्य में स्वतंत्र कश्मीर की सम्भावना बताई थी।** उसी समय खुफिया विभाग के कान खड़े हो गये। तब बी.एन.मलिक उप-निदेशक के रूप में कश्मीर के प्रभारी थे। निदेशक बनने के बाद प्रधानमंत्री के निर्देश से जम्मू-कश्मीर सीधे उनके अधिकार क्षेत्र में आ गया।

उक्त पुस्तक में उन्होंने लिखा है, कि शेख ने आई.बी. के कामों में बाधा डालनी शुरु कर दी। **इसी के साथ उसने पाक**

अधिकृत कश्मीर से उन मुसलमानों को भारत लाना शुरु कर दिया जो विभाजन के समय पाकिस्तान चले गये थे।

मलिक के अनुसार *''हमें सूचना मिली कि पीर मकबूल गिलानी ने पाकिस्तान से सम्पर्क साध लिया है और पाक का एक दूत शेख से मिलने तन्मर्ग (गुलमर्ग के पास) आ रहा है। शक मजबूत तब हुआ, जब ८ अगस्त १९५३ को शेख अचानक तन्मर्ग (श्रीनगर से) को रवाना हो गये। इसी दिन सदरे रियासत ने शेख को बर्खास्त कर दिया।''* ९ अगस्त को प्रातःकाल तन्मर्ग में शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार कर लिया गया। इसी के साथ बख्शी गुलाम मोहम्मद को जम्मू-कश्मीर के प्रधानमंत्री की शपथ दिलाई गई।

अनुच्छेद ३५ए और जोड़ा गया

शेख को सींखचों की पीछे डालने के बाद भी तत्कालीन नेता कश्मीरी नेताओं की मानसिकता नहीं समझ पा रहे थे। बख्शी गुलाम मोहम्मद शेख का दायां हाथ था। उसने जम्मू-कश्मीर की संविधान सभा से अनुच्छेद ३५-ए के प्रावधान पारित करवा लिये। नेहरू सरकार ने तुरंत उन्हें स्वीकार कर धारा ३७० में मिले अधिकारों का उपयोग करते हुए राष्ट्रपति के हस्ताक्षर उस पर करवा लिये। इस प्रकार अनुच्छेद ३५-ए भी संविधान का अंग बन गया। इसमें जम्मू-कश्मीर की नागरिकता किसे मिलेगी, यह बताया गया था।

दिल्ली समझौते के बाद इस अनुच्छेद की आवश्यकता नहीं थी। वास्तव में उसी समझौते को संवैधानिक रूप देने के लिये यह अनुच्छेद लाया गया। भविष्य में कोई सरकार राज्य के नागरिकता कानूनों से छेड़छाड़ न कर सके, इसलिये उक्त कार्रवाई की गई।

यह तत्कालीन केन्द्र सरकार की एक और भयावह गलती थी।

उधर प्रधानमंत्री नेहरू के दुराग्रह पर ८ जन.१९५८ को शेख को छोड़ दिया गया, हालांकि आई.बी. के पास उसे राष्ट्र-द्रोही सिद्ध करने के पर्याप्त सबूत थे।

अब शेख अब्दुल्ला खुल कर कश्मीरियों को बगावत के लिये उकसाने लगा। परिणामस्वरूप चार महीने बाद ३० अप्रेल को उसे फिर सलाखों के पीछे पहुँचा दिया गया।

शेख को पुनः छोड़ा

१९६४ के शुरु में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गुलाम मोहम्मद सादिक जम्मू-कश्मीर के प्रधानमंत्री बन गये। **इस बीच केन्द्र सरकार ने राज्य सरकार के मुखिया का पद प्रधानमंत्री से अन्य प्रांतों की तरह मुख्यमंत्री कर दिया।** पर नेहरू जी अब भी परेशान थे कि उनका एक परम मित्र जेल में है। उन्होंने फिर आई बी के निदेशक मलिक पर दबाव बनाया कि शेख को रिहा कर दिया जाये। मलिक का कार्यकाल समाप्त होने को था। अतः मई १९६४ में शेख अब्दुल्ला को फिर से मुक्त कर दिया गया। तब लाल बहादुर शास्त्री गृहमंत्री थे।२७ मई १९६४ को नेहरू जी के निधन के बाद वे प्रधानमंत्री बने।

बी.एन.मलिक

सदरे रियासत का पद भी सादिक के कार्यकाल में ही बदल कर राज्यपाल हुआ। वे १९७१ में निधन होने तक मुख्यमंत्री रहे। ये भी कट्टरपंथी थे और लगातार अलगाववाद को बढ़ावा देते रहे। सादिक के बाद कांग्रेस के ही सैयद मीर कासिम मुख्यमंत्री बने। शेख अब्दुल्ला अलगाववादी कार्रवाइयाँ करते रहे तथा राज्य सरकार भी उग्रवादियों का पोषण करती रही। सन् १९७१ के युद्ध में जब पाकिस्तान की जबर्दस्त हार हुई तथा उसका पूर्वी भू-भाग अलग होकर बांग्लादेश बन गया तो शेख ने भारत के गुण गाने शुरु कर दिये। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती गाँधी से उसकी पहचान पं.नेहरू के समय से ही थी। अतः अब उसने श्रीमती गाँधी से मिलना-जुलना शुरु कर दिया।

अंधा बाँटे रेवड़ी

कहावत है कि *अंधा बाँटे रेवड़ी फिर-फिर खुद को देत।* नेहरू परिवार को भी कश्मीर में शेख अब्दुल्ला के अतिरिक्त और कोई दिखाई नही पड़ता था। श्रीमती गाँधी ने भी फरवरी, १९७५ में शेख अब्दुल्ला को फिर से मुख्यमंत्री बना दिया। केन्द्र सरकार और शेख के बीच उस समय **कश्मीर समझौता** हुआ। इसमें सत्ता-लोलुप **शेख ने अधूरे मन से कश्मीर को भारत का अविभाज्य अंग मान लिया।**

कश्मीर के लिये कुछ कानून बनाने के केन्द्र के अधिकार को भी जम्मू-कश्मीर सरकार ने मान लिया।

इसी के साथ कुछ और अधिकार केन्द्र सरकार को मिल गये, जिनसे देश के कई कानूनों को राज्य में लागू किया जा सका। भारत का चुनाव आयोग, लेखा महानिदेशक, सर्वोच्च-न्यायालय आदि का अधिकार क्षेत्र कश्मीर तक हो गया।

इसी के साथ १९७५ के कश्मीर समझौते में राज्य के राज्यपाल की नियुक्ति का पूरा अधिकार भी भारत के राष्ट्रपति को मिल गया।

समझौता होते ही मीर कासिम ने त्यागपत्र दे दिया तथा शेख अब्दुल्ला फिर से मुख्यमंत्री बन गया। ***जिसे राष्ट्र-द्रोह के***

आरोप में सजा मिलने वाली थी वह सूबे का प्रधान बन गया! यह केन्द्र सरकार का एक और घातक कदम था।

ऑपरेशन टोपेक

शेख लगभग सात वर्षों तक राज्य का मुख्यमंत्री रहा। यह कालखण्ड भारत विरोधियों और पाकिस्तानी एजेंटो का प्रशासन में ऊपर से नीचे तक घुसपैठ करने का रहा। 'अल-फतह' जैसे आतंकी गिरोह की शेख ने भरपूर सहायता की। १९८२ में शेख साहब के सुपुत्र डा.फारूख अब्दुल्ला मुख्यमंत्री बन गये। बाप सेर, तो बेटा सवा सेर सिद्ध हुआ। सीमा पार से जबर्दस्त घुसपैठ कश्मीर में होने लगी। आरोप लगे कि राज्य सरकार ही घुसपैठ को बढ़ावा दे रही है।

इस समय पाकिस्तान में जनरल जिया-उल-हक राष्ट्रपति थे। १९६५ और १९७१ की पराजयों से पाकिस्तान खिसियाया हुआ था। राष्ट्रपति जिया ने कश्मीर पर कब्जा करने के लिये 'ऑपरेशन टोपेक' नाम की योजना बनाई।

इस षड़यंत्र का पहला चरण कश्मीर घाटी को हिन्दू विहीन करना था।

दूसरा कदम था सीमा से हजारों घुसपैठियों को कश्मीर में घुसा कर सीमा के पास के गाँवों में उनको बसा देना।

आगे का काम था, राज्य प्रशासन में पाकिस्तानी एजेंट घुसा देना जो अराजकता की स्थिति पैदा कर दें। अंतिम चरण में कश्मीर पर सैनिक हमला किया जाना था। जिस समय पाकिस्तानी सेना हमला करे, घुसपैठिये राज्य में उपद्रव करा दें, ताकि भारतीय सेना का बड़ा हिस्सा उसी से निपटने में लग जाये। घुसपैठियों और पाक एजेंटों को आक्रमणकारी पाक सेना की आगे बढ़ने में सहायता भी करनी थी।

१९८८ में जिया-उल-हक तो खुदा को प्यारा हो गया, पर उक्त आपरेशन चलता रहा।

पण्डितों को देश निकाला

भारत में १९८९ के आम चुनाव में कांग्रेस हार गई तथा जन-मोर्चा के विश्वनाथ प्रताप सिंह प्रधानमंत्री बने। उन्होंने कश्मीर के मुफ्ती मोहम्मद सईद को गृहमंत्री बना दिया। राज्य में डा.फारूख अब्दुल्ला मुख्यमंत्री थे। देश का यह दुर्भाग्य था कि मुफ्ती जैसा अलगाववादियों का समर्थक देश का गृहमंत्री बन गया। सैंया जी कोतवाल बन गये तो देश-द्रोहियों की पौ-बारह हो गई। 'ऑपरेशन टोपक' के तहत कश्मीर घाटी से पण्डितों का जबरन निष्कासन शुरु हो गया।

यह पूरा घटनाक्रम हमारे इतिहास का एक काला पृष्ठ है। **अपने ही देश में हिन्दुओं पर जो पाशविक अत्याचार हुए उसका कोई उदाहरण और कहीं नहीं मिलता।**

> १९७५ में हुए कश्मीर समझौते के बाद शेख फिर से मुख्यमंत्री बन गया। जिसे देश-द्रोह के आरोप में सजा मिलने वाली थी वह दोबारा सूबे का मुख्यमंत्री बन गया!

१९ जन.१९९० के दिन श्री जगमोहन जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल बने। राज्य में राष्ट्रपति शासन लगा, तब जा कर स्थितियाँ नियंत्रण में आईं। लेकिन नुकसान हो चुका था। घाटी लगभग हिन्दू विहीन हो चुकी थी। धारा ३७० तथा केन्द्र सरकार के छद्म सेकुलरवाद के कारण अलगाव-वाद के विषवृक्ष बड़े ही होते चले गये। इस बीच फारूख-अब्दुल्ला, मुफ्ती मोहम्मद सईद और उमर अब्दुल्ला बारी-बारी से मुख्यमंत्री बनते रहे और जम्मू-कश्मीर को गहरे से और गहरे गर्त में ले जाते रहे।

आखिर समाधान निकला

वर्ष२०१४ में केन्द्र में भाजपा की सरकार बनी। साल के अंत में जम्मू-कश्मीर विधान सभा की ८७ सीटों के लिये भी चुनाव हुए। लम्बे समय के गतिरोध के बाद पीडीपी और भाजपा ने मिल कर सरकार बना ली तथा मुफ्ती मोहम्मद सईद मुख्यमंत्री बने।

यह केन्द्र सरकार की चतुर रणनीति थी। सरकार का हिस्सा बनने के बाद जम्मू-कश्मीर और विशेष कर घाटी में केन्द्र सरकार को पैठ बनाने का मौका मिल गया। इस बीच ७ जन.२०१६ को मुफ्ती मोहम्मद सईद का निधन हो गया। उनकी पुत्री महबूबा मुफ्ती मुख्यमंत्री बनीं ओर भाजपा के साथ सरकार चलाती रहीं। लोकसभा चुनाव के पहले गठबंधन टूट गया और राज्य में राष्ट्रपति शासन लग गया।

चुनाव प्रचार के समय भाजपा ने देश से वादा किया कि धारा ३७० और ३५ए रद्द कर दी जायेंगी। लगभग दो महीने में ही यह वादा निभाया गया। ५ अगस्त २०१९ को एक ऐतिहासिक फैसला करते हुए केन्द्र सरकार ने दोनों विषैली धाराओं को जड़-मूल से समाप्त कर दिया। इसी के साथ पूरे राज्य को केन्द्र शासित बना दिया गया **जैसा कि यह अंग्रेजों के शासन-काल में था।** लद्दाख को अलग कर बिना विधान सभा के और जम्मू व कश्मीर को विधान सभा के साथ केन्द्र के अधीन किया गया है।

इस तरह लगभग एक लाख लोगों के बलिदान और देश की जनता के खरबों रुपयों के नुकसान के बाद धारा ३७० के घावों की चिकित्सा हुई है। हमारी गम्भीर भूलों के कारण महर्षि कश्यप, जलौक और ललितादित्य महान् का कश्मीर मुस्लिम बहुल हुआ। आजादी के बाद की हाहाकारी भूलों के कारण कश्मीर भारत से अलग होते-होते बचा। ■

-७३/८ परमहंस मार्ग, मानसरोवर, जयपुर

अपना कश्मीर – अपनी भूल

डॉ.सम्पूर्णानन्द
भूतपूर्व राज्यपाल, राजस्थान
पूर्व मुख्यमंत्री, उत्तरप्रदेश

सन् १८९१ में काशी में जन्मे डा.सम्पूर्णानन्द ने सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। १९२२ में वे अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के सदस्य बने। स्वतंत्रता पूर्व बने संयुक्त प्रान्त के मंत्रिमण्डल में वे मंत्री बने। आजादी के बाद उत्तर प्रदेश की सरकार में भी वे शिक्षा, गृह, वित्त आदि विभागों के मंत्री रहे। वर्ष १९५४ से ६० तक डा.सम्पूर्णानन्द कांग्रेस सरकार में मुख्यमंत्री रहे और ६३ से ६७ तक राजस्थान के राज्यपाल रहे। वे हिन्दी और संस्कृत के विद्वान थे। प्रारम्भ में वे शिक्षक थे और 'मर्यादा' जैसे हिन्दी समाचार पत्रों का सम्पादन भी किया। कई पुस्तकें भी उन्होंने लिखी। यह लेख डा.सम्पूर्णानन्द की पुस्तक **अधूरी क्रांति** से लिया गया है। उस समय के वरिष्ठ कांग्रेस नेता भी कश्मीर को विशेष दर्जा दिये जाने को उचित नहीं मानते थे, यह इस लेख से स्पष्ट है -सं.

वह समय याद नहीं आता, जब कश्मीर भारत का अंग नहीं था। याद भी कैसे आए, इतिहास को किसी ऐसे जमाने का पता नहीं है। सबसे पुराना साक्षी वेद, वेदों में भी ऋग्वेद हो सकता है। उसमें हमें जिन आर्यों की झांकी दिख पड़ती है वह यहीं के निवासी थे। यदि उनके पूर्वज तथाकथित रूप से कहीं अन्यत्र से मध्य एशिया, उत्तर ध्रुव, स्केंडिनेविया से आए थे तो वह इस बात को पूर्णतया भूल चुके थे। वह सप्तसिंधव, सिन्धु और सरस्वती के बीच के अन्तर्वेद में रहते थे। इस देश को अपना घर मानते थे। उस समय की भौगोलिक स्थिति के अनुसार सप्तसिंधव के उत्तर में भी समुद्र था और दक्षिण में भी जहां आज गंगा-यमुना का प्रांगण उत्तर-प्रदेश है वहां भी समुद्र था। वह भूभाग जिसमें आर्य रहते थे पंजाब और दक्षिण पश्चिम कश्मीर को मिलाकर बना था। धीरे-धीरे समुद्र हटा, समुद्र के नीचे से हिमालय ने सिर उठाया और ऊंचा होता गया। नई-नई नदियां निकली, नए प्रदेश बने। भारत का विस्तार होता गया। परन्तु जो भूभाग उसका नाभिस्थान था, वह उससे अलग नहीं हुआ। ब्रह्मावर्त अर्थात पंजाब और कश्मीर भारत का पूर्ववत् अंग बना रहा।

देश में बहुत से परिवर्तन हुए। अनेक धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक क्रान्तियां हुई। बहुत से लोग बाहर से आये। कुछ लूटमार करके चले गए। बहुत से यहीं बस गए और भारतीय बन गए। यह सब हुआ पर कश्मीर भारत का अंग बना रहा

कवियों की भूमि कश्मीर

देश में बहुत से परिवर्तन हुए। अनेक धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक क्रान्तियां हुई। बहुत से लोग बाहर से आये। कुछ लूटमार करके चले गए। बहुत से यहीं बस गए और भारतीय बन गए। यह सब हुआ पर कश्मीर भारत का अंग बना रहा।

अंग भी साधारण नहीं, प्रत्युत महत्वपूर्ण। भले ही अफगानिस्तान की ओर से विदेशी आक्रमण हुए परन्तु कश्मीर ने अपनी सीमाओं का विशेष रूप से उल्लंघन नहीं होने दिया और इस प्रकार भारत की पर्याप्त रक्षा की। उसके कई नरेशों ने विशाल साम्राज्य स्थापित किए। शैव-तंत्र की दार्शनिक और साधना धारा का इसी प्रदेश से अभ्युदय और विकास हुआ था। इस प्रदेश के कैयट, मम्मट, जल्हण, अभिनव गुप्त जैसे विद्वानों ने संस्कृत वाङ्मय की जो सेवा की, उसकी स्मृति को कोई जानकार

भुला नहीं सका। इस प्रदेश के कल्याण ने ही राज-तरंगिणी लिखकर, इस लांछन का प्रतिवाद कर दिया कि हिन्दुओं को इतिहास लिखना नहीं आता था। भारत का यह अंग उसके लिए गौरवास्पद था।

कश्मीर-विहीन भारत की किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। ऐसा प्रतीत होता था कि अब तक यह भारत से अविच्छिन्न ही नहीं है वरन् प्रकृत्या अविच्छेद्य है। परन्तु अब इस धारणा को गहरी ठेस लगी है। ऐसा प्रतीत होने लगा है कि जो बात पिछले सैकड़ों वर्षों में नहीं हुई वह अब होकर रहेगी और सारा कश्मीर नहीं तो उसका कुछ भाग हमसे सदा के लिए पृथक हो जायेगा।

रक्षक ही भक्षक बन गए

कश्मीर ने इसके पहले भी बहुत से दुर्दिन देखे हैं। जिस समय पंजाब से होते हुए पठानों ने कई जगह मुस्लिम साम्राज्य स्थापित कर लिया था, उन दिनों भी कश्मीर स्वतंत्र था। तत्कालीन कश्मीर नरेश के लद्दाखी सेनापति ने, जो धर्मतः बौद्ध था, राज्य की गिरती शक्ति को संभाल लिया था। उसने नया राज्यवंश चलाया। यह कोई नई बात नहीं थी। इसके पहले अशोक के दुर्बल वंशज को मारकर पुष्यमित्र ने शुंग वंश को राज्यारूढ़ किया था।

सिंहासनारूढ़ होने पर कश्मीर के नए शासक की इच्छा हुई कि मुझे क्षत्रिय मान लिया जाए। परन्तु कश्मीर के तत्कालीन ब्राह्मणों की मूढ़ बुद्धि ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। उनकी मूर्खतापूर्ण हठ का परिणाम कश्मीर को और सारे देश को भोगना पड़ा। क्षत्रिय न माने-जाने की चोट असह्य हो गई। हिन्दू धर्म से आस्था उठ गई। उसने अपने लड़के के लिए मुसलमान अध्यापक रखा। तीसरी पीढ़ी में सिकन्दर गद्दी पर बैठा। जिन लोगों ने उसके वंश का तिरस्कार किया था, उसने उनसे कैसे बदला लिया था इस बात की कहानी इतिहास के पृष्ठों में ढूंढने की आवश्यकता नहीं। पत्थर के टुकड़े-टुकड़े उस गाथा को सुनाते हैं।

घर के दिए से आग लगी

कश्मीर में प्रवेश करने के बाद थोड़ी-थोड़ी दूर पर विशाल मन्दिर टूटे हुए मिलते हैं। इन सब मन्दिरों को तोड़-फोड़ दिया था सिकन्दर ने, जो अपने को गर्व के साथ बुतशिकन अर्थात् मूर्तियों को तोड़ने वाला कहता था। साल दो साल के भीतर सैकड़ों वर्षों के कला-कौशल पर पानी फिर गया। मन्दिर और मूर्तियां ध्वस्त हो गई। यह सब काम किसी विदेशी शासक ने नहीं किया। अपने घर की बरबादी उस व्यक्ति ने की, जिसका और जिसके वंश का घर में ही तिरस्कार हुआ था। कवि के शब्दों में इस ''घर को आग लग गई घर के चिराग से।''

इतना ही नहीं हुआ, सिकन्दर ने ब्राह्मणों के विरुद्ध नरमेध अभियान बोल दिया। यह राजाज्ञा प्रसारित हुई कि ब्राह्मण जहां मिले मार डाला जाए। हजारों ब्राह्मण मारे गए। कुछ किसी प्रकार प्राण बचाकर जम्मू या भारत भाग आए। एक बहुत बड़ी संख्या मुसलमान हो गई। जब धर्म के रखवाले ही इतनी संख्या में मुसलमान हो गए तो दूसरों का क्या कहना था। राज्य की जनता का स्वरूप ही बदल गया। चारों ओर मुसलमान ही मुसलमान दिख पड़ने लगे। किसी को यह साहस नहीं था कि वह अपने को हिन्दू कह सकता।

सिंहासनारूढ़ होने पर कश्मीर के नए शासक की इच्छा हुई कि मुझे क्षत्रिय मान लिया जाए। परन्तु कश्मीर के तत्कालीन ब्राह्मणों की मूढ़ बुद्धि ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। उनकी मूर्खतापूर्ण हठ का परिणाम कश्मीर को और सारे देश को भोगना पड़ा। क्षत्रिय न माने जाने की चोट असह्य हो गई। हिन्दू धर्म से आस्था उठ गई

श्री नष्ट हो गई

निश्चय ही इससे राज्य की व्यवस्था बिगड़ गई। शासन का प्रायः सारा काम ब्राह्मण ही चलाते थे। राज्य भाषा उस समय भी संस्कृत ही थी। सिकन्दर के उत्तराधिकारी ने ब्राह्मणों को अभय दान दिया। उन्हें लौटने की अनुमति मिल गई। कुछ ब्राह्मण लौटे। उनके वंशज आज भी वहीं हैं। बहुत से मुसलमानों के नाम अब तक इस बात की साक्षी देते हैं कि वह ब्राह्मणों के वंशज हैं। अब चाहे यह प्रथा बदल गई हो, परन्तु आज से कुछ दिन पहले तक श्रीनगर में पं. अलाउद्दीन ऐसे नाम सुनने को मिलते थे। ब्राह्मण लौटे सही, परन्तु कश्मीर वह कश्मीर नहीं रहा और जो '**श्री**' उस समय नष्ट हुई वह अब तक नहीं लौटी।

मुस्लिम षड़यंत्र

१९३०-१९३२ की बात है पंजाब से हजारों मुसलमान कश्मीर में घुस आए। ब्रिटिश सरकार ने बहुत दिनों तक इस प्रकार के आक्रमण को रोका नहीं। ऐसा लगता था कि उसकी यह इच्छा थी कि कश्मीर का राज्य घोर संकट में पड़कर और दुर्बल हो जाए।

यदि हैदराबाद के हिन्दुओं की ओर से कोई ऐसा काम होता, तो सारे देश में मुसलमान बौखला उठते। परन्तु कश्मीर के मामले में हिन्दुओं में क्षोभ नहीं हुआ। राज्य की ओर से कुछ लोग भारत में चारों ओर भेजे गए। उनका विशेष रूप से यह काम था कि समाचार पत्रों के सम्पादकों से मिलें और उनको कश्मीर की परिस्थिति की ओर आकृष्ट करें। इस प्रयत्न का बहुत थोड़ा ही परिणाम हुआ क्योंकि अनुकूल भूमिका पहले से तैयार नहीं थी। मैं उन दिनों स्वयं काशी के एक अंग्रेजी दैनिक पत्र का सम्पादन कर रहा था। इसलिए ये बातें अपनी

जानकारी के आधार पर लिख रहा हूँ।

गलती दोहराई गई

१९४७ में जो घटनाएं हुई हैं, उनकी विशेष चर्चा करना अनावश्यक है। लोग उनसे परिचित हैं। पाकिस्तान की ओर से सीमावर्ती कबीलों के आक्रमण हुए पर उनको पाकिस्तान ने ही उकसाया था। लूट के लालच पर वह लोग आगे बढ़े थे। यह सिद्ध हो गया कि उनको शस्त्रों की सहायता पाकिस्तान से मिली थी। कुछ दिनों बाद पाकिस्तानी सेना की टुकड़ियां भी अन्दर घुसीं और **आजाद कश्मीर** नाम की एक सरकार बना ली गई।

यह सब न होता यदि कश्मीर के महाराज ने भयंकर भूल न की होती। देश के बड़े-बड़े राजा भारतीय गणतंत्र के अंग बन गये। कश्मीर इस मामले में टाल-मटोल करता रहा। उनका ऐसा विचार था कि पाकिस्तान और भारत के बीच पूर्ण स्वतंत्र राज्य बन जायेगा। एक बार जो गलती राज्य के पूर्व महाराजा गुलाब सिंह ने की थी, वही दोहराई गई।

हमारी सेना का शौर्य

अस्तु भारत से मिलने में इतनी देर की गई कि भारतीय सेना का आगे बढ़ना बहुत कठिन हो गया। परन्तु जनरल थिमैया के नेतृत्व में हमारे सिपाहियों ने वह कार्य किया जो चिर-स्मरणीय रहेगा। जैसी ऊंची पहाड़ी चोटियों पर लड़ाई हुई वैसी दुनियां में कम जगह हुई हैं। हमारी सेना आगे बढ़ी, और पाकिस्तानी सेना को पीछे हटना पड़ा।

ऐसे अवसर पर भारत सरकार ने एक ऐसा काम किया, जिसको आज भी बहुत लोग बड़ी भूल समझते हैं। सेना का आगे बढ़ना रोक दिया और सारा विषय संयुक्त राष्ट्र संघ (यूनाइटेड नेशंस) को सौंप दिया गया। ऐसा प्रतीत होता था कि थोड़े ही दिनों में कश्मीर की भूमि पर एक भी पाकिस्तानी सैनिक नहीं रह जाएगा। पर वह बात न होने पाई। आज कश्मीर का एक अंश पाकिस्तान के हाथ में है और इस बात की कोई संभावना प्रतीत नहीं होती है कि यह प्रश्न शीघ्र सुलझेगा। आशंका इस बात की होती है कि बहुत दिनों तक यही परिस्थिति बनी रहेगी और अन्त में स्यात् यही निर्णय होगा कि जो जिसके पास है वह रह जाए।

न्याय करने में असमर्थ

यदि ऐसा हुआ तो भारत का एक टुकड़ा जो सहस्रों वर्षों में उससे कभी पृथक नहीं हुआ, सदा के लिए अलग हो जायेगा। ऐसा शायद कोई भारतीय होगा जिसको इन बातों को सुनकर दुःख न होता हो। पर जब हम कश्मीर के इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो ऐसा पता लगता है कि कश्मीर में जो दुर्दिन आए हैं उनका मुख्य दायित्व घर वालों पर हैं। अपनी ही भूलों से अपने घर को उजाड़ा गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस बात को स्वीकार किया कि पाकिस्तान आक्रमणकारी है। उसने यह भी माना है कि पाकिस्तान ने बराबर उसके आदर्शों की अवहेलना की है पर यह सब मानते हुए भी वह अपने को न्याय करने में असमर्थ पा रहा है। ■

विज्ञापन

छगनलाल बोहरा
क्षेत्रीय संगठन मंत्री
(भारतीय इतिहास संकलन समिति)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कश्मीर

कश्मीर को बचाने में स्वयंसेवकों ने जान की बाजी लगा दी

विभाजन के समय संघ के स्वयंसेवकों ने अपना बलिदान देकर लाखों हिन्दुओं के प्राण बचाये और उनके नये बने पाकिस्तान से सुरक्षित भारत आने की व्यवस्था की। इसी प्रकार जम्मू-कश्मीर पर कबाइलियों की आड़ में पाकिस्तान के आक्रमण के समय भी संघ के कार्यकर्ताओं ने कश्मीर की रक्षा के लिये सब कुछ दाव पर लगा दिया। श्रीनगर के हवाई अड्डे की मरम्मत के साथ सैनिकों की सहायता भी स्वयंसेवकों ने की। इसका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है-

करीब २०० वर्षों तक भारत को बुरी तरह से लूटने के बाद अंग्रेज जब भारत छोड़कर जाने को मजबूर हुए तब भी वे अपनी कुटिलता से बाज नहीं आये भारत कहीं शक्तिशाली न हो जाये अतः भारत के टुकड़े कर पाकिस्तान बना दिया और देशी रियासतों को यह छूट दे दी कि वे चाहे तो पाकिस्तान में मिलें या भारत में और चाहे तो स्वतंत्र रहें। अर्थात् भारत को खण्ड-खण्ड करने की पूरी कुटिल योजना अंग्रेजों ने जिन्ना के साथ मिलकर बनाई और भारतीय नेताओं ने सत्ता के लालच में उसे स्वीकार कर लिया। सौभाग्य से सरदार पटेल ने सभी रियासतों को भारतीय संघ से मिलने के लिए राजी कर लिया फिर भी अमरकोट और चटगांव जैसे हिन्दू बहुल क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये।

कश्मीर के महाराजा हरिसिंह भी इस उहापोह में थे कि वे स्वतंत्र रहें या भारत में मिलें। यद्यपि उन पर पाकिस्तान में मिलने का बहुत दबाव था पर वे किसी कीमत पर पाकिस्तान में नहीं मिलना चाहते थे। उन्हें इस उहापोह की स्थिति से निकाल कर अपनी रियासत को भारतीय संघ में मिलाने की प्रेरणा देने हेतु किसी आध्यात्मिक और विशिष्ट मेधा सम्पन्न व्यक्ति की आवश्यकता थी जो उन्हें भारत के पक्ष में त्वरित निर्णय लेने हेतु तैयार कर सके। भारत के प्रथम गृहमंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल की दृष्टि में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक माधव राव सदाशिवराव गोलवलकर (श्री गुरुजी) के अतिरिक्त और कोई व्यक्ति इस कार्य हेतु सक्षम नहीं था।

महाराजा हरिसिंह भी इस उहापोह में थे कि वे स्वतंत्र रहें या भारत में मिलें। यद्यपि उन पर पाकिस्तान में मिलने का बहुत दबाव था पर वे किसी कीमत पर पाकिस्तान में नहीं मिलना चाहते थे

श्री गुरुजी कश्मीर गये

सरदार पटेल ने श्रीगुरुजी से इस कार्य हेतु आग्रह किया और एक विशेष विमान द्वारा उन्हें श्रीनगर भेजा। श्रीनगर, जम्मू सहित कश्मीर के सभी शहरों में संघ की अच्छी शक्ति खड़ी हो चुकी थी, स्वयंसेवकों में देश के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने का भाव हिलोरें ले रहा था। सिंध, पंजाब में कराची से लाहौर और जम्मू-श्रीनगर तक संघ के कार्यकर्ता हिन्दू रक्षण में लगे हुए थे। इस सबको देखते हुए सरदार पटेल द्वारा श्रीगुरुजी को महाराजा के पास भेजना सर्वथा उचित

भारतीय वायु सेना के विमानों ने वहां गोला-बारूद की कुछ पेटियां सहायता के लिए गिराई परन्तु दुर्भाग्यवश वे पेटियां नगर के अन्दर गिरने के बजाय बाहर पाकिस्तानी मोर्चाबन्दी की मार में जाकर गिरी। आत्मरक्षा और कोटली नगर की रक्षा के लिए इन पेटियों को नगर के अन्दर लाना बहुत आवश्यक था

और सामयिक निर्णय था।

श्रीगुरुजी द्वारा महाराजा हरिसिंह को भारत में विलय के लिए तैयार करना राष्ट्र के एकीकरण का महत्वपूर्ण प्रसंग है। तत्कालीन युवराज कर्णसिंह स्वयं इसके साक्षी रहे हैं। श्रीगुरुजी की प्रेरणा से महाराजा हरिसिंह की उहापोह मिट गई और भारत में विलय का निर्णय लेने में वे सक्षम हुए। विलयपत्र पर हस्ताक्षर से कश्मीर में सेना भेजने का कानूनी मार्ग प्रशस्त हुआ और सरदार पटेल द्वारा अविलम्ब हवाई जहाजों द्वारा कश्मीर में सेना भेज कर पाकिस्तानी सेना को खदेड़ा जा सका।

हवाई अड्डे की मरम्मत

२६ अक्तूबर १९४७ को कश्मीर के भारत में विलयपत्र पर हस्ताक्षर होते ही भारतीय वायुसेना के विमान सैनिक और गोला-बारूद लेकर श्रीनगर के लिए उड़े, पर पाकिस्तानी आक्रांताओं के हवाई अड्डा नष्ट कर दिये जाने के कारण उन्हें उतारने की कठिनाई पैदा हो रही थी। ऐसी विषम स्थिति में श्रीनगर के स्वयंसेवकों ने रात-दिन जाग कर उसकी मरम्मत की और उसे हवाई जहाज उतारने लायक बना दिया। विमान सैन्य सहायता लेकर उतर सके और दुश्मनों को खदेड़ने का कार्य प्रारंभ हुआ।

सेना को कश्मीर के रास्ते बताने, दुश्मनों की संख्या और उनके छुपे होने के स्थल आदि सभी महत्वपूर्ण जानकारियाँ स्वयंसेवकों ने अपने प्राणों पर खेलकर सेना को उपलब्ध कराईं। सेना के जवानों के लिए भोजन तथा अन्य सामग्री उपलब्ध कराने में भी स्वयंसेवक जान हथेली पर रख कर लगे रहे।

२७ अक्तूबर को महाराजा हरिसिंह ने कश्मीर का प्रशासन जवाहरलाल नेहरू के दबाव में शेख अब्दुल्ला को सौंप दिया। श्रीनगर के प्रताप चौक में शेख अब्दुल्ला ने अपने भाषण में भारत विलय और भारतीय सेना की कोई चर्चा न करते हुए अपनी आजादी मुकम्मल करने की बात कही। यह भाषण सुन कर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के बलराज मधोक ने जम्मू के संघचालक पं. प्रेमनाथ डोगरा को फोन कर शेख की मंशा बताई तथा जम्मू में एक राजनैतिक संगठन खड़ा कर जम्मू का प्रशासन उसे सौंपे जाने की मांग करने की योजना बनाने को कहा।

शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर घाटी में अपने वर्चस्व के लिए सबसे बड़ी बाधा बलराज मधोक को समाप्त करने का निश्चय किया। परन्तु येन-केन-प्रकारेण मधोक वहां से बचकर ७ नवम्बर १९४७ को जम्मू पहुंच गये। संघ के कार्यकर्ताओं ने जम्मू में आ रहे लाखों हिन्दू शरणार्थियों की सेवा, बिछुड़ों को मिलाने, रहने, खाने, चिकित्सा आदि की व्यवस्था तन-मन-धन से की।

विभाजन की विभीषिका

मार्च १९४७ से पहले ही रावलपिण्डी, जेहलम, स्यालकोट, गुजरात तथा पश्चिमी पंजाब के अनेक गांवों में हिन्दुओं को मारना, भगाना प्रारम्भ हो गया था। हिन्दू सभी क्षेत्रों से भागकर, जम्मू की ओर आने लगे। रास्ते में स्थान-स्थान पर उन पर हमले होते। धनमाल छीनने के साथ स्त्रियां छीन कर ले जाना, पुरुषों को मौत के घाट उतारने का क्रूर खेल चल रहा था। ऐसी विषम स्थिति में जम्मू और आसपास के स्वयंसेवकों ने उनको बचाने, रहने, खाने का इंतजाम करने तथा बिछुड़े परिवारों को मिलाने का महत्वपूर्ण दायित्व निभाया। जम्मू-पठानकोट तक के मार्ग पर शरणार्थियों की देखभाल करना बहुत बड़ा और जिम्मेदारी का काम था। करीब १० लाख शरणार्थी पंजाब के पाकिस्तानी हिस्सों से पूर्वी पंजाब में भारतीय क्षेत्र की ओर आये और करीब ४ लाख शरणार्थी जम्मू में आये।

सेना को कश्मीर के रास्ते बताने, दुश्मनों की संख्या और उनके छुपे होने के स्थल आदि सभी महत्वपूर्ण जानकारियाँ स्वयंसेवकों ने अपने प्राणों पर खेलकर सेना को उपलब्ध कराईं

सन् १९४० में जम्मू में संघ का कार्य प्रारंभ हो चुका था। लाहौर में कॉलेज शिक्षा के दौरान स्वयंसेवक बने बलराज मधोक ने जम्मू में शाखा प्रारंभ की तथा बाद में श्री जगदीश अब्रोल ने संघ कार्य का पर्याप्त विस्तार किया। मुजफ्फराबाद जिले के डिप्टी कमीश्नर रहे पण्डित प्रेमनाथ डोगरा अवकाश प्राप्ति के बाद संघ की राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रभावित हो जम्मू के संघचालक बने।

इतिहास विषय में लाहौर कॉलेज से एम.ए. करने के बाद बलराज मधोक ने सेना में चयन हो जाने के बावजूद उसे त्यागकर संघ कार्य करने का निश्चय किया और जम्मू में संघ शाखाओं का जाल सभी गांवों में फैलाने के बाद श्रीनगर जाकर संघ कार्य का प्रसार प्रारंभ किया। श्रीनगर के डीएवी कॉलेज में इतिहास के प्राध्यापक के रूप में कार्य करते हुए श्रीनगर और कश्मीर के अन्य शहरों में उन्होंने संघ कार्य खड़ा किया।

जम्मू-पठानकोट तक के मार्ग पर शरणार्थियों की देखभाल करना बहुत बड़ा और जिम्मेदारी का काम था। करीब १० लाख शरणार्थी पंजाब के पाकिस्तानी हिस्सों से पूर्वी पंजाब में भारतीय क्षेत्र की ओर आये और करीब ४ लाख शरणार्थी जम्मू में आये।

१९४७ तक कश्मीर में संघ एक मजबूत संगठन के रूप में खड़ा हो गया था। संगठन के इन्हीं कार्यकर्ताओं के बल पर ही २६ अक्टूबर १९४७ को भारतीय सेना के हवाई जहाज श्रीनगर में उतारने के लिए हवाई पट्टी की मरम्मत की जा सकी तथा भारतीय सेना के कश्मीर घाटी से पाकिस्तानियों को खदेड़ने में सेना की मदद, मार्गदर्शन, रास्तों आदि की जानकारी तथा रसद आदि की सहायता पहुंचाई जा सकी।

बलराज मधोक ने जम्मू में राजनैतिक दल खड़ा करने के भरसक प्रयत्न उस विपरीत परिस्थिति में किये और **प्रजा परिषद** नाम से राजनैतिक संगठन खड़ा कर जनता के लिए एक सम्बल खड़ा किया। सीमावर्ती क्षेत्र के अधिकांश बड़े शहरों में संघ कार्य खड़ा हो गया था जिससे जनता में मनोबल और देशभक्ति का भाव जाग्रत हुआ। जम्मू के सीमावर्ती कस्बों की जनता ने संघ के स्वयंसेवकों के नेतृत्व में आक्रांताओं से जमकर संघर्ष किया।

भिम्बर का बलिदान

भिम्बर पर पाकिस्तानी सेना और आस-पास के मुसलमानों के आक्रमण के समय सभी का लक्ष्य भिम्बर शहर की हिन्दू जनता ही थी। रियासत की सेना ने कुछ समय तक उसका प्रतिरोध किया परन्तु गोला-बारूद समाप्त हो जाने पर वे भी असहाय हो गये। श्री विक्रमजीत कोहली के नेतृत्व में संघ के स्वयंसेवकों ने उन्हें संगठित कर उनमें धैर्य और साहस के संचार का बहुत प्रयास किया, मुकाबला करने को तैयार किया परन्तु गोला-बारूद और हथियारों के अभाव में वे अधिक देर तक टिक नहीं सके। पाकिस्तानियों ने नगर में घुस कर क्रूरतापूर्वक मारकाट और लूटपाट मचाई। अनेक स्त्रियां बलपूर्वक उठा ली गई। अनेक वीरांगनाओं ने अपने पतियों, भाईयों को धर्म की रक्षा हेतु प्राणपण संघर्ष करने की प्रेरणा देने हेतु उनके सामने कुओं में छलांग लगा दी, जहर खा लिया और अनेकों ने अपने पति और भाईयों से आग्रह किया कि वे उनकी गर्दन अपने हाथों से काट कर निर्भयतापूर्वक शत्रु से लोहा लें और वीरगति प्राप्त करें। अनेक स्वयंसेवक अत्यन्त बहादुरी से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। बचे-खुचे हिन्दू वहां से बचकर जम्मू की ओर पलायन कर गये।

जम्मू में पश्चिमी पाकिस्तान के अलावा अब जम्मू रियासत के सीमावर्ती गांवों से भी हिन्दू भाग-भाग कर आने लगे। शरणार्थियों की सेवा व्यवस्था में लगे स्वयंसेवकों का कार्य दिन-दिन बढ़ने लगा।

अनेक वीरांगनाओं ने अपने पतियों, भाईयों को धर्म की रक्षा हेतु प्राणपण संघर्ष करने की प्रेरणा देने हेतु उनके सामने कुओं में छलांग लगा दी, जहर खा लिया और अनेकों ने अपने पति और भाईयों से आग्रह किया कि वे उनकी गर्दन अपने हाथों से काट कर निर्भयतापूर्वक शत्रु से लोहा लें और वीरगति प्राप्त करें

पंजाब रिलीफ सोसायटी के नाम से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सैंकड़ों कार्यकर्ता पं. प्रेमनाथ डोगरा, वैद्य विष्णुगुप्त, श्री दुर्गादास वर्मा, श्री श्यामलाल शर्मा आदि प्रमुख कार्यकर्ताओं के नेतृत्व में दिन-रात जुटकर शरणार्थियों की सेवा कर रहे थे।

मीरपुर के शूर

सीमा क्षेत्र के मीरपुर में आसपास से हजारों हिन्दू शरणार्थी इकट्ठे हो गये थे। ये सभी बुरी तरह से लुटे, पिटे और डरे हुए थे। संघ के मीरपुर के कार्यकर्ताओं ने उन्हें ढांढस बंधाया यथासंभव सहायता की और स्थानीय हिन्दुओं के साथ मिलकर उन्हें संघर्ष के लिए प्रेरित किया। रियासत की सैनिक टुकड़ी के साथ ताल-मेल बनाकर जो कुछ हथियार व गोला-बारूद था उसी के बल पर मोर्चे बना आक्रांताओं से संघर्ष का प्रयास किया। पाकिस्तानियों के पास गोला-बारूद प्रचुर मात्रा में था तथा उन्हें पीछे से सहायता उपलब्ध हो रही थी। इन सबसे ऊपर वे मजहबी जूनून से भरपूर थे कि वे जिहाद पर हैं।

इन सारी विपरीत परिस्थिति में रियासती सेना की टुकड़ी और मीरपुर के स्वयंसेवक भी ज्यादा समय तक टिक नहीं सके। शेख अब्दुल्ला की इस क्षेत्र की हिन्दू जनता के प्रति उपेक्षा के कारण भारतीय सेना की सहायता यहाँ पहुँचने नहीं दी गई।

२२ नवम्बर १९४७ को पाकिस्तानी सेना और स्थानीय मुसलमान मीरपुर की हिन्दू जनता पर चील, कौओं की तरह टूट पड़ी, हजारों हिन्दू मार डाले गये, धन-सम्पत्ति लूट ली गई। हजारों स्त्रियों, बच्चियों पर बलात्कार और अमानुषिक अत्याचार किये गये। पाँच हजार से अधिक

शहीदों की उपेक्षा जिस देश में सही जाती हो उस देश के बच्चों में देशभक्ति के भाव पैदा होने की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दू वीरों का इतिहास प्रकाश में लाया जाये और कश्मीर को बचाने हेतु किये गये राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रयासों के इतिहास को देश के सामने प्रस्तुत किया जाये।

हिन्दू स्त्री-पुरुषों को घेर कर उन्हें जेहलम नगर की ओर ले जाया गया। वहां भेड़-बकरियों की तरह स्त्रियों को अलग कर जेहलम और रावलपिण्डी में बेच दिया गया, तथा पुरुषों को मार दिया गया।

मीरपुर में एकत्र हुए बीस हजार हिन्दुओं में से मुश्किल से दो हजार हिन्दू बचकर जम्मू पहुँच सके जिन्होंने जम्मू के स्वयंसेवकों को मीरपुर के स्वयंसेवकों की बहादुरी, पाकिस्तानियों और स्थानीय मुसलमानों के अत्याचार तथा हिन्दुओं के कत्लेआम के बारे में बताया। मीरपुर, जेहलम, अलीबाग आदि स्थानों में जो अत्याचार हिन्दू स्त्रियों पर हुए वे तैमूर और नादिरशाह के अत्याचारों को भी मात करते थे। देश विभाजन में हिन्दुओं पर हुए अत्याचारों में मीरपुर का हत्याकाण्ड भी शेखपुरा में हजारों हिन्दुओं के सामूहिक हत्याकाण्ड की तरह ही इस्लामिक धर्मांधता का क्रूरतम उदाहरण है।

बारूद के बक्से उठाये

कोटली कस्बा सीमावर्ती क्षेत्र में मीरपुर और पूंछ के बीच था। वहां काफी बड़ी संख्या में हिन्दू आसपास से इकट्ठे हो गये थे। यहां संघ की अच्छी शाखा थी और स्वयंसेवकों की भी बहुत अच्छी संख्या थी जो नित्य के कार्यक्रमों, व्यायाम, हथियार प्रशिक्षण और देशभक्ति के गीतों से हिन्दू जनता में साहस और देशप्रेम का संचार कर रहे थे। रियासत की सैनिक टुकड़ी के साथ मिलकर इन स्वयंसेवकों ने नगर की रक्षा के लिए प्रमुख स्थानों पर मोर्चाबन्दी कर जनता का मनोबल बनाये रखा था।

कई दिनों तक पाकिस्तानी सेना के आक्रमणों का मुंहतोड़ जवाब इस मोर्चाबन्दी से दिया गया। परन्तु गोला-बारूद की कमी की वजह से वे धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लगे। इसी समय भारतीय वायु सेना के विमानों ने वहां गोला-बारूद की कुछ पेटियां सहायता के लिए गिराई परन्तु दुर्भाग्यवश वे पेटियां नगर के अन्दर गिरने के बजाय बाहर पाकिस्तानी मोर्चाबन्दी की मार में जाकर गिरी। आत्मरक्षा और कोटली नगर की रक्षा के लिए इन पेटियों को नगर के अन्दर लाना बहुत आवश्यक था।

वहाँ स्थित भारतीय सैनिक कमाण्डर ने आह्वान किया कि कुछ लोग जाकर वे पेटियाँ उठा लावें तो पाकिस्तानियों को करारा जवाब दिया जा सकता है। पेटियां लेने जाना साक्षात मौत के मुंह में जाना था, कोई इसके लिए तैयार नहीं हो रहा था। यह स्थिति देख संघ के कुछ स्वयंसेवक इसके लिए आगे आये और बरसती गोलियों में पेटियों को सुरक्षित नगर में लाने के बाद ही भारतमाता की जय का जयघोष करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। इन वीर स्वयंसेवकों के नाम आज कोई नहीं जानता पर उनके बलिदान ने हजारों हिन्दू स्त्री-पुरुषों की प्राण रक्षा की और हजारों युवकों को मातृभूमि और धर्मरक्षा के लिए अनाम रह कर अपने प्राण न्यौछावर करने की प्रेरणा दी। उन अनाम वीरों को शत-शत नमन।

याद रहे कि शहीदों की उपेक्षा जिस देश में सही जाती हो उस देश के बच्चों में देशभक्ति के भाव पैदा होने की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? आवश्यकता इस बात की है कि कश्मीर पर आक्रमण और हिन्दू वीरों द्वारा किये गये प्रतिरोध का सम्पूर्ण इतिहास प्रकाश में लाया जाये और कश्मीर को बचाने हेतु किये गये राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रयासों के इतिहास को देश के सामने प्रस्तुत किया जाये। ■

– बोहरा गणेश मार्ग, उदयपुर

विज्ञापन

छलयुक्त परिसीमन से सत्ता का सुख भोगते रहे मुफ्ती- अब्दुल्ला

जम्मू-कश्मीर राज्य के जन प्रतिनिधित्व कानून की धारा ३ के अनुसार परिसीमन आयोग विधान सभा क्षेत्रों का निर्धारण करने के लिए निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखेगा-

१-अनुसूचित जाति की जनसंख्या के अनुपात में उनके लिए विधानसभा सीटों का आरक्षण

२- पिछली जनगणना(जिसके आंकडे प्रकाशित हो चुके हों) के आधार पर विधानसभा क्षेत्र की जनसंख्या

३- भौगोलिक सघनता (जुड़ाव)

४- क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति

५- संचार के साधनों की उपलब्धता जनसम्पर्क सुविधा आदि

यदि उपरोक्त मानदण्डों को लागू किया जाए तो कश्मीर घाटी की भौगोलिक संरचना जम्मू के मुकाबले काफी सुगठित है। जम्मू की तुलना में कश्मीर में सड़क निर्माण दो-ढाई गुना अधिक है। इस सबके बावजूद विधानसभा में कश्मीर घाटी को जम्मू से अधिक सीटें दी गईं।

१९४१ की जनगणना के अनुसार जम्मू-कश्मीर राज्य की जनसंख्या ४०लाख थी। क्षेत्रशः जम्मू की २०लाख, कश्मीर घाटी की १७ लाख और गिलगित, स्कार्दू, कारगिल, लद्दाख की जनसंख्या ३१ लाख थी।

क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत के विभाजन, जम्मू-कश्मीर रियासत के विलय तथा १९४७-४८ के भारत-पाक युद्ध के बाद कश्मीर घाटी का क्षेत्रफल १५००० वर्ग किमी, जम्मू का क्षेत्रफल २७००० किमी तथा लद्दाख का क्षेत्रफल ५९००० किमी है।

अक्तूबर १९४७ में पाकिस्तानी सैनिकों (कबायली भेष में) द्वारा किये गए आक्रमण में बहुत बड़ी संख्या में हिन्दुओं को पाक अधिकृत जम्मू-कश्मीर से अपनी जान बचाकर भागना पड़ा था। बहुत बड़ी संख्या में लोग जम्मू-कश्मीर आकर बस गए, और कुछ राज्य से बाहर चले गए। १९५१ में चुनाव से पहले जनसंख्या की गणना नहीं की गई।

> जम्मू-कश्मीर की विधान सभा में कश्मीर घाटी को जम्मू और लद्दाख से अधिक प्रतिनिधित्व मिला हुआ था। यह बिना किसी आधार के सिर्फ इसलिये किया गया कि सरकार का मुखिया (मुख्यमंत्री) हमेशा कश्मीर घाटी से वही बने जो अलगाव-वादियों का समर्थक हो। इस परिसीमन को भी अब जनसंख्या आधारित किया जाना जरूरी है।

दोषपूर्ण परिसीमन

१ मई १९५१ को युवराज कर्णसिंह ने उद्घोषणा क्र. २२ द्वारा जम्मू कश्मीर की संविधान सभा गठित करने की घोषणा की। इस प्रक्रिया में यह सुझाव दिया गया कि राज्य को लगभग ४०,००० मतदाताओं वाले निर्वाचन क्षेत्रों में बांटा जाएगा। १९५१ में किया गया परिसीमन अत्यन्त अन्यायपूर्ण तथा भेदभाव वाला था और राज्य के पिछड़े और दूर-दराज के इलाकों में रहने वाले लोगों पर अत्याचार था। संवैधानिक रूप से भी जम्मू-कश्मीर के संविधान की धारा ५० तथा जनप्रतिनिधि कानून १९५७ की धारा ४ के दिशा निर्देशों का १९५१ में हुए आंतरिक परिसीमन में साफ तौर से उल्लंघन किया गया। आज तक इन दिशा निर्देशों का और परिसीमन से जुड़े नियमों का राज्य की किसी भी सरकार ने पालन नहीं किया।

कहीं भी इस बात का उल्लेख नहीं मिलता कि १९५१ में किस आधार पर निर्वाचन क्षेत्र निर्धारित किए गए थे। शेख

विधान सभा चुनाव २०१४			
जम्मू क्षेत्र		कश्मीर घाटी	
विधान सभा क्षेत्र	मतदाता संख्या	विधान सभा क्षेत्र	मतदाता संख्या
गांधीनगर	१६९६७२	गुरेज (बारामूला)	१७५५४
जम्मू पश्चिम	१५३७९४	करनाह	३३१३२
राजौरी	११५६४७	खानयार	५१०१०
विजयपुर	११३०८२	हब्बाकडल	५४८५२
कठुआ	११३०७५	ईदगाह	५८८२२
हीरानगर	११०७५३	गुलगाम	९४३६२
पुंछ	९९९५८	शोपियां	८२३४८
रायपुर डोमान	९८४२०	बारामूला	८२९३४
अखनूर	९७१२५	अनन्तनाग	८३८०६

विधान सभा चुनाव २००८	
जम्मू क्षेत्र	मतदाता संख्या
जम्मू	८५७६२
डोडा	८३५१०
पुंछ	८६५२६
राजौरी	८८३६४
कठुआ	८०५५७
कश्मीर घाटी	मतदाता संख्या
श्रीनगर	६९६८५
अनन्तनाग	७००८९
बारामूला	७४०३०
कुपवाड़ा	६८२००
बड़गांम	७६७८२

अब्दुल्ला की सरकार ने १०० में से २५ सीटें पाक अधिकृत जम्मू-कश्मीर के लिए अलग रखी। बाकी ७५ में से घाटी के लिए ४३, जम्मू के लिए केवल ३० तथा लद्दाख के विशाल भू भाग के लिए २ सीटें निर्धारित की। सीटों का बंटवारा देखने से लगता है जैसे यह मान लिया गया कि जम्मू का बड़ा हिस्सा पाकिस्तान के कब्जे में चला गया है, इसलिए जम्मू की जनसंख्या और सीटों की संख्या दोनों कम होंगी। जबकि १९४१ की जनगणना के अनुसार जम्मू की जनसंख्या सबसे अधिक थी। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि पाक अधिकृत क्षेत्र से विस्थापित अधिकतर लोग जम्मू में बसे, यानि जम्मू की जनसंख्या देश के विभाजन के बाद बढ़ी। दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य यह है कि जनसंख्या की गणना किये बिना सीटों का जो बंटवारा १९५१ में हो गया वही आज तक चल रहा है।

१९६१ की जनगणना के अनुसार कश्मीर की जनसंख्या १८ लाख तथा जम्मू की १६ लाख दर्ज की गई। १९६६ में कश्मीर की सीटें ४३ से ४२ कर दी गई और एक सीट जम्मू को दी गई यानि ३० से ३१ कर दी गई। तब भी कश्मीर में ४२८५० लोगों पर एक विधायक था। जबकि जम्मू के लिए ५१६०० लोगों पर एक विधायक था।

जम्मू क्षेत्र द्वारा विरोध करने पर १९७५ में धारा ४८ के खंड (क) में १२वा संविधान संशोधन कर पाक अधिकृत जम्मू-कश्मीर की २५में से एक सीट घटा कर २४ कर दी और वह सीट जम्मू को दी। इससे भारतीय नियंत्रण वाले जम्मू कश्मीर राज्य की सीटों संख्या ७६ हो गई (कश्मीर ४२, जम्मू ३२ तथा लद्दाख २)।

१९८१ तक परिसीमन आयोग का गठन नहीं किया गया क्योंकि कश्मीर के नेता यह जानते थे कि यदि परिसीमन ईमानदारी से किया गया तो निश्चित रूप से जम्मू की सीटें बढ़ेंगी। अन्ततः ३० साल बाद परिसीमन आयोग का गठन १९८१ में हुआ तो उसका काम १९९५ तक खींचा

जम्मू-कश्मीर संविधान

४७ (१) विधान सभा प्रत्यक्ष निर्वाचन से चुने गए एक सौ सदस्यों से मिलकर बनेगी।

४७ (२) उप धारा (१) के प्रयोजनों के लिए राज्य के क्षेत्रों (विधान सभा) को इस तरह विभाजित किया जाएगा ताकि व्यवहारिक रूप से प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की आबादी और उसके लिए आवंटित सीटों की संख्या के बीच का अनुपात पूरे राज्य में एक जैसा होगा।

४७ (३) प्रत्येक जनगणना के पूरा होने पर निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या तथा परिसीमन पुनः निर्धारित किया जाएगा.....

४९ (१) राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति की जनसंख्या के अनुपात के अनुरूप लगभग उसी अनुपात में राज्य विधान सभा में अनुसूचित जाति के लिए सीटें आरक्षित होंगी।

सन् २००२ में कश्मीर के नेताओं ने एक और चाल चली और २९वें जम्मू-कश्मीर संविधान संशोधन से धारा ४७ को संशोधित कर परिसीमन को साल २०२६ तक के लिए स्थगित कर दिया। अर्थात २०३१(जनगणना वर्ष) तक घाटी के नेता परिवारों ने अपना शासन सुनिश्चित कर दिया।

गया। आयोग के निर्णयानुसार जम्मू की सीटें ३२ से बढ़ाकर ३४ तथा कश्मीर की सीटें ४२ से घटाकर ४० कर दी गई। यह निर्णय नियमों को ताक पर रखकर मनमाने तरीके से लिया गया था।

१९८७ में विधान सभा ने जम्मू कश्मीर संविधान संशोधन २० पारित कर विधान सभा की सीटों की संख्या १०० से बढ़ाकर १११ कर दी गई। पाक अधिकृत जम्मू कश्मीर के लिए २४ सीटें जबकि राज्य के बाकी हिस्सों के लिए ८७ सीटें तय की गई। जनसंख्या, भौगोलिक संरचना तथा सभी नियम कानूनों को ताक पर रखकर कश्मीर घाटी को ४६(+६), जम्मू केा ३७ (+३) तथा लद्दाख को ४(+२) सीटें दी गई। उल्लेखनीय है कि १९९० में लाखों हिन्दुओं को कश्मीर घाटी से मार भगा दिया गया था, जिसमें से बड़ी संख्या में लोग जम्मू क्षेत्र में जा बसे। लेकिन न जम्मू की सीटें बढ़ी, न ही कश्मीर घाटी की कम हुई।

सन् २००२ में कश्मीर के नेताओं ने एक और चाल चली और २९वें जम्मू-कश्मीर संविधान संशोधन से धारा ४७ को संशोधित कर परिसीमन को साल २०२६ तक के लिए स्थगित कर दिया। अर्थात वर्ष २०३१(जनगणना वर्ष) तक घाटी के नेता परिवारों ने अपना शासन सुनिश्चित कर दिया। यही नहीं इस संशोधन के परिणाम स्वरूप धारा ४९ भी निष्क्रिय हो गई और अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित सीटों में भी २०३१ तक कोई बदलाव न होगा सुनिश्चित कर दिया गया। यह संशोधन राज्य के दलितों पर सीधा आघात करता है और उनके अधिकारों का हनन करता है।

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि १९५१ से ही मुस्लिम बहुल कश्मीर घाटी के नेताओं ने जम्मू कश्मीर राज्य पर अपने निरंकुश शासन की व्यवस्था राज्य के संविधान के माध्यम से कर दी। अनुच्छेद ३७० तथा ३५ए के माध्यम से मुस्लिम शासन की निरन्तर (अनन्तकाल तक) सुनिश्चित की गई। परिणामस्वरूप जम्मू तथा लद्दाख क्षेत्र न केवल उपेक्षित और विकास से वंचित हुए बल्कि वहाँ के लोग राज्य में दूसरे दर्जे के नागरिकों का जीवन जीने को विवश हैं।

५ अगस्त २०१९ को जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा जारी अध्यादेश अनुच्छेद से ३७० में संशोधन की घोषणा तथा इस प्रस्ताव पर संसद के दोनों सदनों में दो तिहाई बहुमत से पारित होना जम्मू तथा लद्दाख क्षेत्रवासियों के लिए आशा की किरण लाया है। अब ३१ अक्तूबर २०१९ से जम्मू-कश्मीर तथा लद्दाख २ अलग केन्द्र शासित प्रदेशों के रूप में कार्य करेंगे। इस संशोधन से लद्दाख क्षेत्र के अलग केन्द्र शासित प्रदेश बनने से उसका क्षेत्रीय विकास निश्चित रूप से गति पकड़ेगा। किन्तु जम्मू क्षेत्र का विकास तथा वहां रहने वाले नागरिकों का भला तभी हो पाएगा, जब जम्मू-कश्मीर के केन्द्र शासित प्रदेश के विधान सभा क्षेत्रों का तर्क संगत तथा न्यायपूर्ण परिसीमन होगा तथा उस क्षेत्र को शासन प्रशासन तथा जन प्रतिनिधियों की संख्या में उचित प्रतिनिधित्व मिलेगा।

यहीं नहीं पूरे केन्द्र शासित प्रदेश में अनुसूचित जाति के साथ-साथ अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़े वर्गों के नागरिकों को भी पूरे देश की तरह शिक्षा, नौकरी तथा जन प्रतिनिधित्व में आरक्षण दिया जाएगा। ■

– मेघराज खत्री

विज्ञापन

गोपाल शर्मा
सम्पादक
दैनिक महानगर टाइम्स

पंडितों के पलायन की रोमहर्षक गाथा

ऐसे दुर्दिन किसी को न देखने पड़ें

यह एक दर्दनाक दास्तान है, ऐसे अंतहीन अत्याचार शायद ही किसी देश की जनता को भुगतने पड़े हों। १९९० में जम्मू कश्मीर के लाखों हिन्दुओं को इस भयावह त्रासदी के कारण अपने ही देश के हिस्से से विस्थापित होना पड़ा। वे कहते थे, 'इसका सिर्फ एक कारण है-भारत से प्रेम, क्योंकि हमें भारत माता प्यारी है।' १९९० के आखिर में इन यातनाओं से गुजरकर देश के अन्य हिस्सों की तरह ही हजारों कश्मीरी हिन्दू राजस्थान भी आए, सैकड़ों परिवार जयपुर आए। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ताओं ने आवास और भोजन की तात्कालिक व्यवस्था की। उसी दिन सांगानेरी गेट स्थित धर्मशाला में एक संवाददाता के रूप में पहुँचा तो उनकी दर्दनाक हालत देखकर रोना आ गया। उनकी आंखों में खौफ था ओर चेहरे पर करुणा। उनके गले बैठे हुए थे और हर इंसान में उन्हें मदद करने वाले भाव नजर आते थे। उस समय हुई बातचीत के ये अंश हैं। ३० साल बाद इन्हें पढ़कर विश्वास नहीं होगा कि भारत जैसे विशाल और आजाद देश में यहाँ के परम्परागत बहुसंख्यक समाज को इन रोमहर्षक अत्याचारों से गुजरना पड़ा होगा। उस समय वे यह भाव लेकर विस्थापित हुए थे कि एक दिन वे अपनी धरती पर जरूर लौटेंगे। धारा ३७० की समाप्ति के बाद उस अवसर की याद महत्वपूर्ण है।

''कश्मीर घाटी में सिर्फ श्रीनगर स्थित सचिवालय से राजभवन तक ही भारत सरकार का शासन नजर आता है। बाकी कहीं न तो भारत, हिन्दुस्तान, इंडिया नाम लिखा दिखता है और न कहीं तिरंगा झंडा फहराया जा सकता है।''

''हमने अस्मत लुटी बहनों के क्षत-विक्षत शव देखे हैं और अपनी आंखों के सामने अपने आराध्य देवी-देवताओं की मूर्तियां खंडित होते देखी हैं। सरकार ने हमारी कोई मदद नहीं की।..लेकिन अब हम अपने बच्चों को तैयार करेंगे। वहां (कश्मीर में) हमारी खीर भवानी है, हमारे अमरनाथ हैं। हम हर बलिदान देने को तैयार हैं। हमें हमारी धरती पर वापस लौटना है इस संकल्प के साथ अब हम जिएंगे।''

पीड़ा, आक्रोश और दृढ़ता के ये मिले-जुले स्वर कश्मीर घाटी से विस्थापित हुए हिन्दुओं के प्रतिनिधि संगठन जम्मू-कश्मीर सहायता समिति के पदाधिकारियों के हैं जो उन्होंने सामूहिक भेंटवार्ता में व्यक्त किए।

अपने जीजा और बहन को हमेशा के लिए खो चुके कश्मीर के उद्योगपति रहे हीरालाल चत्ता (सहायता समिति के महासचिव) ने आंसू भरी आंखो में कंपित स्वर से बताया, **''मेरे जीजा डॉ. कुंदनलाल गंजू कृषि वैज्ञानिक थे और बहन पराना गंजू अंग्रेजी की प्राध्यापक थीं। खुशहाल परिवार था। लेकिन अलगाववादियों ने डॉ. गंजू के शरीर पर कपड़े प्रेस करने का आयरन घुमाया, बाल नोंचे और आंखे निकालकर हत्या कर दी। पराना गंजू के साथ बलात्कार करने के बाद शरीर के कुछ अंग काटकर मार डाला।''** हीरालाल चत्ता

का नौजवान भतीजा सुरिन्दर कुमार चत्ता भी उग्रवादियों के हाथों मौत का शिकार हो चुका है।

क्रूरता की पराकाष्ठा

ऐसा हादसा केवल इस परिवार के साथ ही नहीं हुआ। **जम्मू-कश्मीर सहायता समिति** के पास एक-एक मौत का हिसाब दर्ज है। समिति के उपाध्यक्ष और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कश्मीर विभाग संघचालक अमरनाथ वैष्णवी ने जानकारी दी कि **कश्मीर घाटी में ५२५ हिन्दुओं की हत्याएं हो चुकी हैं और १७५ हिन्दू लापता हैं।** इनमें से कई हत्याएं इतने जघन्य तरीके से की गईं कि जिनसे हिन्दुओं की रूह भी कांप उठे और भय के कारण लोग कश्मीर छोड़कर भाग जाएं।

कुछ घटनाओं की बर्बरता की जानकारी देते हुए इन कश्मीर विस्थापितों ने बताया कि बारामूला जिले के बांदीपुरा गांव की अध्यापिका गिरजा देवी तनख्वाह लेने कुपवाड़ा जिले के त्रहगांव गई थीं। **वहां उनके साथ बलात्कार करके लकड़ी काटने की मशीन के आरे से चीर दिया गया।**

श्रीनगर के मेडिकल साइंस इंस्टीट्यूट की नर्स सरला को इंस्टीट्यूट में हो रही अलगाववादी गतिविधियों का पता चल गया तो उसके साथ बलात्कार हुआ और अंग-अंग काटकर हत्या कर दी गई। श्रीनगर के अस्थमा के मरीज बृजनाथ और उनकी पत्नी सुमित्रा को जीप के पीछे बांधकर घसीटा गया, जिससे उन दोनों की मृत्यु हो गई। बारामूला के बंसीलाल शर्मा का शरीर कुल्हाड़ी से टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया। **कुकरनाग** के श्रीनगर में अध्यापक बृजनाथ प्रेमी के माथे पर तिलक लगाने के स्थान को मोमबत्ती से जलाया गया, फिर गरम सलाखों से दाग-दाग कर मार डाला गया। श्रीनगर के इस अत्यंत लोकप्रिय अध्यापक के लड़के को भी गोली मारी गई। वह तुरंत मेडिकल इंस्टीट्यूट ले जाने पर बच गया। लेकिन यह सूचना उग्रवादियों को मिल गई। उन्होंने वहां इलाज करवा रहे उस नौजवान की हत्या कर डाली।

पलायन ही एकमात्र रास्ता

कश्मीर में विभिन्न हादसों से हुई हत्याओं के अलावा दूसरे तरह के नुकसान का ब्यौरा देते हुए श्री अमरनाथ ने बताया कि कश्मीरी हिन्दुओं के २०४० मकान या तो जला दिए या बम विस्फोट करके नष्ट कर दिए। १२०० मकान लूट लिए गए। इसके कारण कुल ५५ करोड़ रुपये की संपत्ति का नुकसान हुआ। बारामूला जिले में ४०, कुपवाड़ा जिले में २००, श्रीनगर में ४०० और बड़गांव में ५० मकानों की सूची समिति के पास है, जो जला दिए गए। इन्होंने कुछ मकान मालिकों के नाम भी बताए। इसी तरह, ४०५० छोटी-बड़ी दुकानें जला दी गईं या नष्ट कर दी गईं। समिति के पदाधिकारियों ने बताया कि कश्मीर घाटी में एक भी मंदिर सुरक्षित नहीं रह गया है। किसी में आग लगाई गई;किसी मंदिर की मूर्तियां खंडित कर दी गईं और किसी मन्दिर में मांस फेंककर उसे भ्रष्ट कर दिया गया।

कार्यकर्ताओं ने और बताया कि उस

नेताओं ने बनाये अलगाववादी गिरोह

समिति के नेताओं ने बताया कि १९८६ में कभी कांग्रेस से सम्बद्ध रहे डॉ. काजी मुहम्मद निसार, जमायते इस्लामी के प्रो. मुहम्मद अशरफ सर्राफ, सईद अलीशाह गिलानी और मुस्लिम एम्पलाइज फ्रंट के प्रो. अब्दुल गनी ने मिलकर मुस्लिम युनाइटेड फ्रंट बनाया, जिसने चुनाव भी लड़ा था। बाद में इसी फ्रंट के युवा कार्यकर्ताओं ने एक उग्रवादी गिरोह **हिजबुल मुजाहिदीन** खड़ा कर दिया।

इसी की तर्ज पर पूर्व मंत्री और युवक कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष अली मुहम्मद सागर ने **अल मुजाहिदीन** नामक गिरोह खड़ा किया, जिसके पास अत्याधुनिक शस्त्रास्त्र बताए जाते हैं। इस समय कश्मीर घाटी में दर्जन भर से ऊपर उग्रवादी गिरोह हैं जो भारत की प्रभुसत्ता का विरोध कर रहे हैं। इनमें हिजबुल मुजाहिदीन, अल्लाह टाईगर, जम्मू-कश्मीर लिबरेशन फ्रंट, पीपुल्स लीग, अल उमर, अल मुजाहिदीन, इख्वान-अल-मुसलमीन, स्टूडेंट लिबरेशन फ्रंट, दुख्तरानी मिल्लत और मुस्लिम-गुरिल्ला प्रमुख हैं।

जम्मू-कश्मीर समिति के नेताओं का आरोप है कि कश्मीर में आतंकवादियों को सर्वाधिक शह मुफ्ती मुहम्मद सईद और गुलाम मुहम्मद शाह के हाथों मिली। उन्होंने बताया कि अनंतनाग जिले के बिजबिहारा के मुफ्ती मुहम्मद सईद ने जनमोर्चा में आने से पहले कांग्रेस की अंदरूनी राजनीति में प्रभाव बनाए रखने के लिए अलगाववादियों से मदद ली थी। वे गृहमंत्री बने तो पुत्री डॉ. रूबिया के अपहरण के बदले पांच आतंकवादियों को रिहा करवाकर अलगाववादियों के सामने उन्होंने घुटने टेक दिए।

आरोपी रूबिया की असलियत

समिति के महासचिव हीरालाल चत्ता ने बताया कि श्रीनगर में हुए भारत-आस्ट्रेलिया क्रिकेट मैच के दौरान भारतीय टीम को अपमानित करने वालों में तब छात्रा रही रूबिया भी शामिल थी। उस मैच में कपिल देव मैदान छोड़कर चले गए थे। जिन लोगों के खिलाफ प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज हुई थी, उनमें रूबिया भी थी।

ये महबूबा मुफ्ती की बड़ी बहिन हैं। जम्मू-कश्मीर में मारा जाने वाला पहला आतंकवादी एजाज अहमद था, और मुफ्ती मुहम्मद सईद जम्मू-कश्मीर कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहने के दौरान उसके यहां ठहरते थे। पूर्व में राज्यसभा सदस्य रहे गुलाम रसूल कार भी कश्मीर घाटी छोड़कर अब दिल्ली में रह रहे हैं। लेकिन उनका पुत्र एजाज अहमद कार रूबिया अपहरण कांड में गिरफ्तार हुआ था। पूर्व कांग्रेसी विधायक गुलाम नबी मिर्जा के दो बेटे सोपोर में राष्ट्रीय ध्वज जलाते हुए गिरफ्तार किए गए थे। कांग्रेस के ही नेता इस्तकार हुसैन अंसारी (पूर्व विधायक और जिनके पास मारुति कार की एजेंसी है) के शोरूम की नई गाड़ियां कई बार आतंकवादी गतिविधियों में पकड़ी गईं। फारूख अब्दुल्ला की सरकार जब गिराई जाने लगी थी तो कट्टरपंथियों की मदद लेने के लिए उन्होंने कहा था कि **वे जब लंदन में पढ़ते थे तो जम्मू-कश्मीर लिबरेशन फ्रंट के सदस्य थे।**

स्थिति में पलायन के सिवाय कोई चारा नहीं था। कश्मीर घाटी में सिखों सहित कुल ३ लाख अल्पसंख्यक हिन्दू थे। इनमें से करीब सौ परिवारों को छोड़कर सभी पलायन करके जम्मू सहित दूसरे प्रांतों में आ गए। इनमें १७,७०० सिख परिवार भी शामिल हैं। विस्थापितों के ५३ हजार परिवार जम्मू में ही रह रहे हैं, जिनका पूरा ब्यौरा सरकार के पास दर्ज है। इनके अलावा दस हजार परिवार दिल्ली में, ढाई हजार परिवार उत्तरप्रदेश और एक हजार परिवार राजस्थान में रह रहे हैं।

जम्मू-कश्मीर सहायता समिति

समिति के उपाध्यक्ष अमरनाथ वैष्णवी, महासचिव हीरालाल चत्ता, प्रचार सचिव मोतीलाल मल्ला सहित कई प्रमुख विस्थापित सामाजिक कार्यकर्ताओं ने बताया कि कश्मीर घाटी में व्याप्त अलगाववाद और आतंकवाद का हल इसलिए नहीं निकल रहा है, कि राज्य का गुप्तचर विभाग, पुलिस विभाग और प्रशासन तो कुछ करता नहीं और सेना को कुछ करने का अधिकार ही नहीं है।

विस्थापित पदाधिकारियों का कहना है कि इन सब स्थितियों के बावजूद कश्मीर घाटी के सारे लोग अलगाववादी नहीं हैं। **उन्होंने जानकारी दी कि वहां के विस्थापित ३ लाख हिन्दू-सिख, ५-६ लाख गूजर (मुसलमान), ढाई लाख शिया और हजारों की तादाद में सुन्नी कश्मीर को भारत के साथ जोड़े रखना चाहते हैं। लेकिन आतंकवाद के खिलाफ सरकारी कार्रवाई के अभाव में कश्मीर घाटी में दहशत और आतंक का राज कायम हो चुका है।** इसलिए हिन्दू-सिख तो पलायन कर आए तथा शेष लोग उग्रवादियों के इशारों पर चलने के लिए मजबूर हैं।

समिति के नेताओं ने अनेक उदाहरण देते हुए आरोप लगाया कि नेशनल कांफ्रेंस और कांग्रेस की गलत नीतियों के कारण ही वहां अलगाववाद और उग्रवाद पनपा तथा **राष्ट्रीय मोर्चा** (तब केन्द्र में वी पी सिंह सरकार थी) की गलत नीति ने उसे जैसे ज्वालामुखी के मुहाने पर लाकर खड़ा कर दिया। उन्होंने कई ऐसे उदाहरण दिए जिनसे सिद्ध होता है कि नेशनल कांफ्रेंस और कांग्रेस के कुछ नेताओं की अलगाववादियों से सांठ-गांठ है। समिति ने हाल ही में प्रधानमंत्री से मिलकर एक पत्र की फोटो स्टेट कापी सौंपी **जो पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के प्रधानमंत्री सिकन्दर हयात खां ने जम्मू-कश्मीर के पूर्व शिक्षा मंत्री और कांग्रेसी नेता पीरजादा मुहम्मद सईद को लिखा था। उसमें न केवल 'कश्मीर बनेगा पाकिस्तान' लिखा हुआ था बल्कि सईद के कार्यों को लेकर धन्यवाद दिया गया था।**

समिति के नेताओं ने जानकारी दी कि जो सौ हिन्दू परिवार अब भी कश्मीर घाटी में रह रहे हैं उनमें से ज्यादातर या तो उग्रवादियों को कमाई का आधा हिस्सा देते हैं या फिर उनकी गतिविधियों में सहयोग करते हैं।

उन्होंने बताया कि **कांग्रेस के पूर्व विधायक श्रीकंठ कौल** अब भी श्रीनगर के लाल चौक में अमीर कदल में रहते हैं। उन्हें अब तक कोई दिक्कत इसलिए नहीं हो रही है क्योंकि उन्होंने अपने सारे संस्थानों में कट्टरपंथियों को नौकरियां दीं। इसी तरह कर्मचारी नेता हृदयनाथ वांचु भी रहे हैं जो खुलेआम आतंकवादियों का साथ देते नजर आते हैं। ■

-११८, हीरानगर, जयपुर

५ अगस्त को नया इतिहास रचा गया

धारा तीन सौ सत्तर का विषवृक्ष जड़-मूल सहित उखाड़ा गया

डा. पुरुषोत्तम लाल चतुर्वेदी
कुलाधिपति, हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय

धारा ३७० के रूप में संविधान में एक अनुच्छेद सम्मिलित करने का निर्णय पं.नेहरू ने लिया, जिसके अंतर्गत कश्मीर के विशेष दर्जे को स्वीकार कर विदेशी मामले, मुद्रा एवं संचार व्यवस्था तथा सेना, इन तीन मामलों को छोड़कर बाकी अन्य विषयों पर कश्मीर को पूर्ण अधिकार दे दिये गये।

गत ५ अगस्त को केन्द्र सरकार ने एक ऐतिहासिक और युगान्तरकारी निर्णय लेकर संपूर्ण देश में हलचल मचा दी। यह सर्वविदित है कि जम्मू और कश्मीर १९४७ से भारतीय संघ का अभिन्न अंग रहा है। संविधान के अनुच्छेद ३७० के अंतर्गत एक विशेष अस्थायी व्यवस्था के द्वारा दिये गये कुछ प्रावधानों के कारण यह विषय गत सत्तर सालों से विवाद के घेरे में रहा है। ५ अगस्त २०१९ को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल की अनुशंसा पर धारा ३७० के प्रावधानों में आधारभूत बदल करते हुये राज्य को अस्थाई तौर पर दी गई विशेष व्यवस्थाओं को समाप्त करने का निर्णय लिया। इसके साथ ही १९५४ में तत्कालीन राष्ट्रपति ने कश्मीर के संबंध में जो धारा ३५-ए जोड़ दी थी उसे भी समाप्त करने का निर्णय लिया गया। इसी के साथ सियाचीन सहित लद्दाख को राज्य से अलग कर केन्द्र शासित प्रदेश (बिना विधान सभा) और शेष कश्मीर को विधान सभा सहित केन्द्र शासित कर दिया गया।

ऐतिहासिक समर्थन

राष्ट्रपति ने इस विषय की आज्ञा प्रसारित कर दी। इसके तुरंत बाद ही गृहमंत्री श्री अमित शाह ने केन्द्रीय मंत्रिमण्डल की अनुशंसा पर राष्ट्रपति द्वारा जारी इस अधिसूचना के प्रसारण की जानकारी राज्य सभा को दी और प्रस्तावित किया कि सदन इसको स्वीकार करे। इसके साथ ही भारतीय संविधान में एक और प्रावधान के द्वारा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े सामान्य वर्ग के जम्मू-कश्मीर के नागरिकों को आरक्षण देने वाली सुविधा, जो देश के अन्य भागों में पूर्व में ही लागू कर दी गई थी, उसे भी जम्मू-कश्मीर में लागू करने की स्वीकृति प्रदान की जाये।

संविधान के प्रावधानों के अनुसार उपरोक्त व्यवस्थाओं के लिये राज्यपाल के माध्यम से जम्मू-कश्मीर विधानसभा की अनुशंसा भी आवश्यक है। गत एक वर्ष से जम्मू-कश्मीर में राष्ट्रपति शासन लागू होने के कारण यह अधिकार स्वयमेव भारतीय संसद को प्राप्त हो जाते हैं। इसलिये उपरोक्त दोनों विषय राज्य सभा की स्वीकृति हेतु गृहमंत्री श्री अमित शाह ने प्रस्तुत किये। राज्य सभा ने दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर दिया। दूसरे दिन ६ अगस्त को लोकसभा ने भी प्रचण्ड बहुमत से प्रस्ताव पारित कर दिया।

वोटों के लिये विरोध

अनुच्छेद ३७० के अस्थाई प्रावधान को समाप्त कर केन्द्र सरकार ने एक साहसिक कदम उठाया है। कुछ लोगों के अनुसार धारा ३७० के इन प्रावधानों को हटाना अकल्पनीय था, किन्तु भारत और कश्मीर

की निर्द्वंद्व, निष्कंटक और असंदिग्ध एकता में यह धारा सबसे बड़ी चुनौती बन रही थी। इसके कारण कश्मीर के मूल निवासी लाखों पंडितों को घाटी से निकाल दिया गया, महिलाओं का सतीत्व लूटा गया और उन्हें मुसलमान बना लिया गया। कांग्रेस सहित कुछ अन्य दलों के सांसदों ने इन प्रस्तावों का विरोध किया। उन्होंने अपनी आपत्ति में यह कहा कि कश्मीर के विलय के समय धारा ३७० के रूप में दिये गये विशेष अधिकारों को इस तरह संसद द्वारा समाप्त नहीं किया जा सकता। उन्होंने यह भी कहा कि विलय के समय पर दिया गया यह भारत सरकार का वचन था। इन सब तर्क-वितर्कों की प्रामाणिकता परखने के लिये धारा ३७० की पृष्ठभूमि का मंथन करना आवश्यक है।

भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम १९४७ के अनुसार देशी रियासतों को यह अधिकार दिया गया था कि वे देश के स्वतंत्र होने पर चाहे तो भारतीय संघ में सम्मिलित हों अथवा पाकिस्तान में या चाहें तो वे स्वतंत्र भी रह सकती हैं। ऐसी छोटी-बड़ी ५६३ देशी रियासतें उस समय थी। इसके अंतर्गत एक ही प्रकार का विलय पत्र भी तैयार किया गया। कश्मीर के अतिरिक्त सभी देशी रियासतों के राजाओं ने सरदार पटेल के प्रयत्नों से भारतीय संघ में अपने सम्मिलित किये जाने की सहमति प्रदान कर दी, किंतु कश्मीर के राजा हरिसिंह निर्णय नहीं ले पा रहे थे।

काक की काक-चेष्टा

जम्मू-कश्मीर में उस समय श्री रामचन्द्र काक प्रधानमंत्री थे। श्री काक की पत्नी ब्रिटिश नागरिक थी और तत्कालीन वायसराय माउंटबेटन की पत्नी की सहेली थी। उन्होंने महाराजा को यह परामर्श दिया की कश्मीर को भारत और पाकिस्तान से समान दूरी रखते हुए स्विट्जरलैण्ड के जैसा एक स्वतंत्र राज्य रखना चाहिए। जम्मू-कश्मीर राज्य ३ भागों में विभाजित था। पहला मुस्लिम बाहुल्य कश्मीर घाटी, दूसरा हिन्दू बाहुल्य जम्मू और तीसरा बौद्ध बाहुल्य लद्दाख। घाटी के निवासी शेख अब्दुला १९२८ में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से एम.एस.सी. कर लौटे और कश्मीर में मुस्लिम कान्फ्रेंस के नाम से एक दल बनाया। १९३०-३१ में मीरपुर (कश्मीर) में मुस्लिम समुदाय ने दंगे किये और बड़े पैमाने पर पंडितों का नरसंहार हुआ। महाराजा ने इस दंगे को सख्ती से दबा दिया। इसके बाद शेख अब्दुला के नेतृत्व में **मुस्लिम कान्फ्रेंस** का महाराजा हरिसिंह से विरोध चलता रहा।

१९४६ में शेख अब्दुल्ला ने महाराजा हरिसिंह को निकाले जाने हेतु ''कश्मीर छोड़ो'' आंदोलन प्रारंभ किया। अपने इस आंदोलन में जन-समर्थन जुटाने हेतु उन्होंने मुस्लिम कांफ्रेंस का नाम बदलकर **नेशनल कान्फ्रेंस** कर दिया और उसके सम्मेलन में अपने निकटस्थ मित्र पं. जवाहर लाल नेहरू को आमंत्रित किया। महाराजा हरिसिंह ने नेहरू जी को इस आंदोलन के संबंध में कश्मीर न आने की प्रार्थना की। किंतु पं. नेहरू फिर भी आये और परिणामस्वरूप उन्हें तत्काल बंदी बना लिया गया। इस घटना से महाराजा हरिसिंह और पं. नेहरू के संबंध काफी कटु हो गये।

शेख अब्दुला ने महाराजा हरिसिंह को निकाले जाने हेतु ''कश्मीर छोड़ो'' आंदोलन प्रारंभ किया। अपने इस आंदोलन में जन-समर्थन जुटाने हेतु उन्होंने मुस्लिम कांफ्रेंस का नाम बदलकर नेशनल कान्फ्रेंस कर दिया और उसके सम्मेलन में अपने निकटस्थ मित्र पं. जवाहर लाल नेहरू को आमंत्रित किया।

सरदार का परामर्श

उप-प्रधानमंत्री और गृहमंत्री सरदार पटेल को कश्मीर के संबंध में सारी जानकारी प्राप्त हो रही थी। उन्होंने महाराजा हरिसिंह को परामर्श दिया कि रामचन्द्र काक को हटाकर मेहरचंद महाजन को कश्मीर का दीवान बनायें। महाराजा ने सुझाव मान लिया कुछ समय पश्चात् काक के स्थान पर मेहरचंद महाजन ने रियासत के दीवान के रूप में कार्यभार संभाल लिया। मेहरचंद महाजन ने महाराजा से इस बात का आग्रह किया कि उन्हें कश्मीर का विलय भारत के साथ कर देना चाहिए। दूसरी और सरदार पटेल ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री गुरुजी को आग्रह किया कि वे कश्मीर जाकर महाराजा हरिसिंह को भारत के साथ विलय के लिये मनायें। तदनुसार श्री गुरुजी ने १८ अक्तूबर १९४७ को श्रीनगर जाकर महाराजा हरिसिंह से भेंट की और उन्हें तुरंत भारत में विलय कर लेने का अनुरोध किया। महाराजा ने श्री गुरुजी की सलाह मान ली। लौटकर उन्होंने यह सूचना सरदार पटेल को भी दे दी।

उसी समय कबाइलियों के वेश में पाकिस्तानी सेना ने जम्मू-कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। महाराजा की सेना में आधे से अधिक मुसलमान थे। पाकिस्तान का हमला होते ही वे महाराजा को छोड़ कर हथियारों सहित पाकिस्तानियों के साथ हो गये। शेष बची सेना ने भरसक प्रयत्न किया किन्तु शस्त्रास्त्रों की कमी के कारण कश्मीरी सेना अधिक प्रतिरोध नहीं कर पाई और पाकिस्तानी आगे बढ़ने लगे।

कश्मीर का विलय

ऐसी स्थिति में मेहरचंद महाजन के आग्रह पर महाराजा हरिसिंह ने २५ अक्तूबर १९४७ को भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम के अंतर्गत दिये विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर

अपना दूत दिल्ली भेजा। यहां यह स्मरण रहे, कि इसी प्रकार के विलय पत्र पर देश की अन्य रिसायतों ने भारत में विलय किया था। इस विलय पत्र में किसी प्रकार की कोई शर्त नहीं थी। २६ अक्तूबर १९४७ को भारत सरकार ने विलय को स्वीकार कर तुरंत अपनी सेनाऐं कश्मीर भेजी। भारतीय सैनिकों ने अपने कौशल और पराक्रम के बूते पर पाकिस्तानी सेनाओं को कश्मीर से खदेड़ना प्रारंभ कर दिया और इस प्रकार खदेड़ते-खदेड़ते पर्याप्त भू-भाग वापिस अपने कब्जे में कर लिया।

भारतीय सेनाएं बढ़ती जा रही थीं और पूरे कश्मीर की मुक्ति निकट ही थी कि माउंटबेटन के आग्रह पर नेहरू जी ने उस विषय को **संयुक्त राष्ट्र संघ** में दे दिया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ में कश्मीर का मामला ले जाने के निर्णय की जानकारी गृहमंत्री सरदार पटेल को भी नहीं थी और मंत्रिमण्डल को भी नहीं थी। **संयुक्त राष्ट्र संघ** ने ३ शर्तों के साथ युद्ध-विराम करवा दिया। और इस प्रकार कश्मीर का जो भाग पाकिस्तानी सेनाओं के अधिकार में आया वह आज भी पाक अधिकृत (गुलाम) कश्मीर के रूप में विद्यमान है।

इसके बाद पं. नेहरू ने महाराजा पर दबाब डाल कर शेख अब्दुल्ला को जम्मू-कश्मीर का प्रधानमंत्री बना दिया। शेख अब्दुल्ला ने यह शर्त रखी कि महाराजा हरिसिंह राज्य से बाहर रहेंगे। एक ओर निजाम हैदराबाद जिसने सशस्त्र विद्रोह किया था, उसे राज-प्रमुख बनाया गया और दूसरी ओर महाराजा हरिसिंह को निष्कासित किया गया। हरिसिंह जीवन के शेष भाग में कभी कश्मीर में प्रवेश नहीं कर सके।

शेख अब्दुल्ला ने शासन संभालने के बाद सरकार पर दबाव डाला कि कश्मीर की विशिष्ट परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुये भारत सरकार जम्मू-कश्मीर राज्य को विशिष्ट सुविधाएं दे। स्मरण रहे कि उस समय देश की संविधान सभा संविधान का निर्माण कर रही थी। नवम्बर १९४९ में (विलय के २ वर्ष पश्चात्) धारा ३७० के रूप में संविधान में एक अनुच्छेद सम्मिलित करने का निर्णय पं. नेहरु ने लिया, जिसके अंतर्गत कश्मीर के विशेष दर्जे को स्वीकार कर विदेशी मामले, मुद्रा एवं संचार व्यवस्था तथा सेना, इन तीन मामलों को छोड़कर बाकी अन्य विषयों पर कश्मीर को पूर्ण अधिकार दे दिये गये। उस समय पं. नेहरु अमरीका गये हुये थे और उन्होंने बिना मंत्रिमंडल की अनुमति के संविधान सभा को निर्देशित किया कि धारा ३७० को संविधान में जोड़ा जाये।

विधि मंत्री और संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर ने पं. नेहरु को कह दिया कि वे ऐसे किसी प्रावधान का मसौदा नहीं बनायेंगे। तब बिना विभाग के मंत्री श्री गोपालस्वामी आयंगर ने यह प्रावधान संविधान में जुड़वाया। पं. नेहरु के इस प्रयास का कांग्रेस में ही तीव्र विरोध हुआ। इस विरोध का नेतृत्व मौलाना हसरत मोहानी ने किया, जिन्होंने रोष प्रकट करते हुये कहा कि जम्मू-कश्मीर से इस प्रकार के प्रस्ताव द्वारा भेदभाव बरता जा रहा है। इस स्थिति में गोपाल स्वामी आयंगर ने कांग्रेस के नेताओं से कहा कि पं. नेहरू के अमरीका में होने के कारण उनके प्रस्ताव की अस्वीकृति विदेशों में गलत संदेश देगी। इसलिये इस प्रावधान को अस्थायी रूप से कुछ समय के लिए स्वीकार किये जाने का अनुरोध आयंगर ने कांग्रेस के नेतृत्व से किया

> सरदार पटेल ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री गुरुजी को आग्रह किया कि वे कश्मीर जाकर महाराजा हरिसिंह को भारत के साथ विलय के लिये मनायें। तदनुसार श्री गुरुजी ने १८ अक्तूबर १९४७ को श्रीनगर जाकर महाराजा हरिसिंह से भेंट की और उन्हें तुरंत भारत में विलय कर लेने का अनुरोध किया।

दो विधान-दो निशान

स्पष्ट है कि जम्मू-कश्मीर के विलय के समय कश्मीर को विशेष सुविधाएं देने की कोई बात स्वीकार नहीं की गई थी। अनुच्छेद ३७० के पश्चात् जम्मू-कश्मीर में अलग संविधान सभा बनी और उसमें यह प्रावधान किये गये कि जम्मू-कश्मीर का अलग ध्वज होगा, अलग संविधान होगा और राज्य सरकार का प्रमुख प्रधानमंत्री कहलायेगा। राज्यपाल के स्थान पर **सदर-ए-रियासत** होगा और भारत का कोई नागरिक बिना **परमिट** के कश्मीर में प्रवेश नहीं कर सकेगा और कश्मीर की नागरिकता भारत की नागरिकता से भिन्न होगी। भारत के नागरिकों को कश्मीर में भूमि खरीदने, नौकरी करने अथवा वहाँ बसने की सुविधायें नहीं मिलेंगी।

इन प्रावधानों के विरोध में जम्मू-कश्मीर के राजनैतिक दल **प्रजा-परिषद** ने श्री प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में आन्दोलन प्रारम्भ किया। इस प्रबल आंदोलन में कई लोग गोलीकांड व लाठीचार्ज में मारे गये, हजारों लोग बंदी बनाये गये। भविष्य की रणनीति बनाने के लिये प्रजा-परिषद ने एक कार्यकर्ता सम्मेलन आयोजित किया। श्यामा प्रसाद मुखर्जी सहित देश के अन्य नेताओं को इस सम्मेलन में आकर राज्य को जानने का निमंत्रण प्रजा-परिषद् ने दिया। **भारतीय जनसंघ** के अध्यक्ष डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और हिन्दू महासभा के वी.जी. देशपाण्डे सहित अनेक नेताओं ने सम्मेलन में भाग लिया और प्रजा परिषद् के आंदोलन को अपना पूर्ण समर्थन दिया। इसी के साथ

देशभर में इन दलों ने आंदोलन का निश्चय किया।

डा.मुखर्जी की शहादत

सैकड़ों की संख्या में सत्याग्रही जम्मू जाने लगे और वहां जाकर उन्होंने 'एक देश में दो विधान, दो निशान और दो प्रधान' के प्रावधानों के विरोध में सत्याग्रह किया। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने सत्याग्रहियों का नेतृत्व संभाला और घोषणा की कि वे ६ मई १९५२ को बिना परमिट के कश्मीर में प्रवेश करेंगे। डॉ. मुखर्जी के साथ सांसद उमाशंकर त्रिवेदी, दिल्ली प्रदेश जनसंघ के अध्यक्ष वैद्य गुरुदत्त व अटल बिहारी वाजपेयी थे। पठानकोट के पार कश्मीर सीमा में माधोपुर पहुंचने पर डॉ. मुखर्जी सहित २ लोगों को बंदी बना लिया गया। डॉ. मुखर्जी ने अटल जी से कहा –''*जाकर देश को बता दो कि डॉ. मुखर्जी ने बिना परमिट के कश्मीर में प्रवेश कर लिया है, चाहे बंदी के रूप में।*'' आंदोलन चलता रहा।

यकायक २४ जून को प्रातःकाल समाचार आया कि २३ जून की रात डॉ. मुखर्जी का देहांत हो गया। इसके पूर्व उनके स्वास्थ्य के संबंध में कभी कोई जानकारी नहीं दी गई थी। संपूर्ण देश में दुःख की लहर छा गई। चारों ओर से मांग उठने लगी, कि डॉ. मुखर्जी की संदेहास्पद परिस्थितियों में मौत की जांच की जाये। पं. नेहरू की सरकार ने उसे अनसुना कर दिया और इस प्रकार एक प्रखर राष्ट्र-भक्त कश्मीर के एकीकरण के लिए बलिदान हो गया। आंदोलन भी स्थगित हो गया।

इसके कुछ समय पश्चात् ही नेहरू सरकार ने शेख अब्दुल्ला को देशद्रोही गतिविधियों में लिप्त पाये जाने के कारण प्रधानमंत्री पद से हटाकर बंदी बना लिया और उनके स्थान पर बख्शी गुलाम मोहम्मद को प्रधानमंत्री बनाया। राज्य सरकार के आग्रह पर भारत के राष्ट्रपति ने सन् १९५४ में धारा ३५-ए भी संविधान में जोड़ दी। इसमें जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थाई नागरिकता के प्रावधान किये गये थे। यहाँ तक व्यवस्था की गई कि कश्मीर की कोई लड़की शेष भारत के किसी लड़के से शादी कर लेती है तो उसकी कश्मीर की नागरिकता समाप्त हो जायेगी और पैतृक सम्पत्ति में उसके अधिकार समाप्त हो जायेंगे।

यह भी व्यवस्था की गई कि भारत के अन्य प्रांतों का कोई भी नागरिक जम्मू-कश्मीर में उद्योग-धन्धे नहीं लगा सकता। तभी से निरंतर इन प्रावधानों को समाप्त करने की मांग होती रही, किंतु किसी भी सरकार ने इनको समाप्त करने का साहस नहीं दिखाया। वर्तमान सरकार को यह श्रेय जाता है कि उन्होंने दोनों व्यवस्थाओं को समाप्त कर सही अर्थों में कश्मीर का भारत में एकीकरण पूर्ण किया है। इसकी समाप्ति से आतंकवाद, अलगाववाद, परिवारवाद और भीषण भ्रष्टाचार को एक झटके में समाप्त कर दिया गया है। ■

– १६, श्याम नगर, जयपुर

विज्ञापन

तीन सौ सत्तरवीं धारा, कंठ पर धरा हुआ आरा
उठाकर फेंक दिया डल में, मुक्ति दे दी दो ही पल में
वीरता गजब दिखाई है तुम्हें सौ बार बधाई है।।

अभी तो शीश कुचलना है

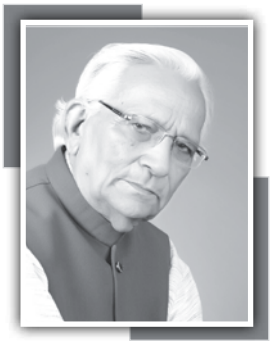

बलवीर सिंह 'करुण'
- केशव नगर, अलवर

रसातल में जा दुबक गई
फौज उन पत्थरबाजों की
शत्रु के झण्डे लहराती
भीड़ निकृष्ट जनाजों की
पाक की जय के नारे थे
महकती केसर क्यारी में
जहर ही जहर भर गया था
गुलाबों की फुलवारी में
सात दशकों से भी ज्यादा
हवाएँ खुशबू को तरसी
लिये गंगाजल खड़ी रही
घटाएँ वहाँ नहीं बरसी
देश का अतुलित प्यार लिये
वहाँ पहुँची पुरवाई है
वीरता गजब दिखाई है।
तुम्हें सौ बार बधाई है।।

दलों से ऊपर पहली बार
उठे नेताओं का वन्दन
हमारी पावन संसद का
करें सब मिलकर अभिनन्दन
भगतसिंह बिस्मिल औ अश्फाक
झुकाकर भारत माँ को शीश
साथ में बैठे वीर पटेल
लुटाते होंगे सौ आशीष
हवा में घुमा-घुमा शमशीर
नाची होंगी लक्ष्मीबाई
और बापू के अधरों से
हँसी फूटी बाहर आई
सँदेसे उन सब वीरों के
किरन धरती तक लाई है
वीरता गजब दिखाई है।
तुम्हें सौ बार बधाई है ।।

आज साकार हुआ जैसे
भोर का मीठा सपना सा
आज कश्मीर लगा हमको
बहुत कुछ अपना-अपना सा
हमारी नेह भरी पाती
वहाँ तक पहुँच न पाती थी
खुशबुएँ भीनी केसर की
यहाँ तक कभी न आती थी
सभी बाधाएँ दूर हुई
तिरंगा खुलकर फहराया
दूर लद्दाख तलक पहुँचा
प्यार केरल ने भिजवाया
हवाएँ अनथक नाच रही
खुमारी ऐसी छाई है
वीरता गजब दिखाई है।
तुम्हें सौ बार बधाई है ।।

दिशाओं सावधान रहना
हवाओं खुले कान रखना
अभी कुछ और बड़ा होगा
सजग ओ आसमान रहना
अभी तो सूर्य शिखर पर है
देर से उसको ढलना है
अभी तो पूँछ मात्र कुचली
अभी तो शीश कुचलना है
एक भी आतंकी विषधर
नहीं जीवित बच पायेगा
आज राणा वाला भाला
वहाँ खुलकर लहरायेगा
लपट सत्तावन वाली फिर
लौट हहराती आई है
वीरता गजब दिखाई है।
तुम्हें सौ बार बधाई है ।।

सपना वर्मा
संस्थापक,
वुमेन सोशियल स्पोर्ट्स ग्रुप

उत्कृष्ट शिक्षा का केन्द्र कश्यपपुर

ईसा भी वेदान्त की शिक्षा लेने कश्मीर आये थे

यह लगभग सर्वमान्य तथ्य है कि ईसा मसीह बारह वर्ष की आयु में फिलीस्तीन से चल कर भारत आ गये थे और उन्होंने पहले काशी फिर श्रीनगर और उसके बाद ल्हासा (तिब्बत) में शिक्षा प्राप्त की। भारत में शिक्षा प्राप्त कर जब वे पुनः स्वदेश पहुँचे तब वे तीस वर्ष के थे। भारत में उन्होंने वेद, उपनिषद, संस्कृत-भाषा एवं षड़ दर्शनों का अध्ययन किया। बौद्ध दर्शन के अध्ययन के लिये वे कश्मीर गये। प्रस्तुत लेख में प्रामाणिक रूप से उक्त तथ्य सिद्ध किये गये हैं (सं.)

ऋषि कश्यप ने कश्मीर कब बसाया इसका हिसाब लगाना कुछ कठिन है। त्रेता और द्वापर दोनों में कश्मीर के उल्लेख है, इसलिये कहा जा सकता है कि भारत के सदा से अभिन्न अंग रहे कश्मीर का इतिहास भी अनेक युगों का तथा लाखों वर्ष पुराना है। महाभारत काल के बाद से तो कश्यपपुर (कश्मीर) का सिलसिलेवार और पूर्ण प्रामाणिक इतिहास उपलब्ध है। जैसे कश्यप सागर से केस्पियन सी (मध्य एशिया, रूस और पश्चिम एशिया के बीच का समुद्र) बन गया, वैसे ही कश्यपपुर से कश्यपमीर और फिर कश्मीर बन गया।

कश्मीर में प्रारम्भ से ही शैव मत प्रभावी था। हिन्दू धर्म ने कई मत-पन्थों को जन्म दिया और सभी भारत में फले-फूले। शैव-पंथ भी हिन्दू धर्म का ही एक अंग है जैसे कि शाक्त, वैष्णव, आर्य समाज, लिंगायत आदि सम्प्रदाय हैं। पूरे क्षेत्र में भगवान शिव शंकर की पूजा होती थी। वेदों का अध्ययन और अध्यापन पूरे क्षेत्र में होता था। लगभग ढाई हजार वर्ष पहले सम्राट अशोक के काल में बौद्ध मत का प्रभाव यहाँ बढ़ गया। अनेक बौद्ध-मठ, विहार यहाँ खोले गये और अनेक युवक बौद्ध-पंथ में दीक्षित हो इसके प्रचार के लिये उत्तर और उत्तर पूर्व के देशों में गये। आद्य शंकराचार्य भारत भ्रमण के समय कश्मीर भी आये और श्रीनगर की डल झील के किनारे पर स्थित पहाड़ी पर उन्होंने साधना की। यह पहाड़ी अब शंकराचार्य-पहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। पहाड़ी की चोटी पर एक सुन्दर शिव-मंदिर है जिसकी स्थापना आचार्य शंकर ने ही की थी। पर्वत की तलहटी में आचार्य ने एक मठ की स्थापना भी की थी।

> दो हजार वर्ष पहले भारत में शिक्षा के दो बड़े केन्द्र थे। काशी और श्रीनगर। पूरी दुनिया, विशेष कर एशियाई देशों के भी शिक्षार्थी काशी और कश्मीर में वेदों की शिक्षा प्राप्त करते थे। ऐसे ही छात्रों में ईसा भी थे जो फिलिस्तीन से बारह वर्ष की आयु में अध्ययन के लिये काशी आये थे।

शिक्षा का केन्द्र

आद्य शंकराचार्य के प्रभाव से कश्मीर में पुनः वेदों की शिक्षा प्राथमिकता से होने लगी। आचार्य अभिनव गुप्त शैव-मत के प्रमुख आचार्य थे। एक हजार वर्ष पूर्व जन्मे अभिनव गुप्त प्रकाण्ड विद्वान तथा तन्त्र के ज्ञाता होने के साथ-साथ नाट्य और संगीत कला में भी निष्णात थे। तात्पर्य यह है कि अत्यंत प्राचीन काल से कश्मीर शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र रहा। तक्षशिला जैसा ही एक विद्यापीठ बारामूला से कुछ आगे

स्थित था, जो अब नियंत्रण रेखा पर है। इस विशाल गुरुकुल के ध्वंसावशेष पाक अधिकृत कश्मीर में हैं। वेदान्त, शैव और बौद्ध मतों के अतिरिक्त राजनीति, ज्योतिष और विविध कलाओं की शिक्षा का यह प्रमुख केन्द्र था।

काशी और कश्मीर

दो हजार वर्ष पहले भारत में शिक्षा के दो बड़े केन्द्र थे। काशी और श्रीनगर। भारत के कोने-कोने से अध्ययन के लिये छात्र यहाँ आते थे। पूरी दुनिया, विशेष कर एशियाई देशों के भी शिक्षार्थी काशी और कश्मीर में वेदों की शिक्षा प्राप्त करते थे। ऐसे ही छात्रों में **ईसा** भी थे जो फिलिस्तीन से बारह वर्ष की आयु में अध्ययन के लिये काशी आये थे। काशी से वे कश्मीर और फिर बौद्ध मत की शिक्षा के लिये तिब्बत गये। लगभग अठारह वर्षों तक ईसा मसीह ने भारत में शिक्षा ली और साधना की। उनका अंतिम समय भी कश्मीर में ही निकला और वहीं उनका निधन हुआ। यहीं पर उनकी मजार भी है।

ईसाई पादरियों ने ईसा के भारत में शिक्षा लेने की बात जान-बूझ कर छिपा ली। ईसा की किसी भी जीवन गाथा में उनके १२ से ३० वर्ष के जीवन-काल के बारे में कुछ नहीं बताया गया है। उसी प्रकार उनकी मृत्यु भी रहस्य के घेरे में है। लेकिन यह तो स्वतः सिद्ध है कि उनकी शिक्षाओं में वेदान्त और बौद्ध-मत का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। पादरियों ने ईसा के काशी और कश्मीर में शिक्षा प्राप्त करने को क्यों गुप्त रखा। इसकी पृष्ठभूमि में **निकेया की कौंसिल** है जो सन् ३२५ में रोम के सम्राट **कोंस्तेंताइन** ने आयोजित की थी। निकेया अब **इज्निक** नाम से इंस्तम्बुल के पास तुर्की में है।

निकेया परिषद

ईसा का जन्म फिलिस्तीन के बेथ्लेहेम में आज से लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व हुआ था। उनकी माता का नाम

श्रीनगर स्थित ईसा मसीह की मजार जिसे आज-कल रोजा बल के नाम से जाना जाता है।

मरियम, पिता का नाम जोसेफ और पत्नी का नाम मेरी मॅग्डेलीन था। पादरियों को पता था कि ईसा की १२ वर्ष की आयु से लेकर ३० वर्ष तक की आयु की शिक्षा भारत के विभिन्न प्रदेशों मे हुई थी जिसमें कश्मीर का संदर्भ प्रमुख तौर पर आता है। चर्च को यह भी पता था, कि ईसा की मृत्यु सलीब पर नहीं हुई थी, वे जीवित थे और उनके अनुयायी उन्हे पुनः भारत के कश्मीर प्रदेश में ले आए थे और बाकी का ३० वर्षो का जीवन उन्होंने कश्मीर में निकाला और उनकी मृत्यु ८० वर्ष की आयु में कश्मीर में हुई। कश्मीर में ही उनकी मज़ार आज भी है।

दो हजार वर्ष पहले भारत में शिक्षा के दो बड़े केन्द्र थे। काशी और श्रीनगर। भारत के कोने-कोने से अध्ययन के लिये छात्र यहाँ आते थे। पूरी दुनिया, विशेष कर एशियाई देशों के भी शिक्षार्थी काशी और कश्मीर में वेदों की शिक्षा प्राप्त करते थे। ऐसे ही छात्रों में ईसा भी थे जो फिलिस्तीन से बारह वर्ष की आयु में अध्ययन के लिये काशी आये थे।

यह बात ईसा के मृत्यु के ३०० वर्ष बाद की है। कोंस्तेंताइन रोम के पहले ईसाई राजा थे। सन् ३२५ में उन्होंने पादरियों की एक सभा **निकेया** (अब इज्निक-तुर्की) में बुलाई। यूरोप के प्रमुख ३१८ पादरियों ने इसमें हिस्सा लिया। इसी सभा में बाईबल के स्वरूप की रचना हुई या यूँ कहें कि बाईबल ही लिखी गई। इसमें प्रमुख निर्णय जो लिये गये वे इस प्रकार थे-

१. ईसा की जन्मतिथि २५ दिसंबर प्रचारित करना, जब कि वास्तव में जन्म ग्रीष्मकाल का माना जाता है।

२. जीसस के १२ वर्ष से लेकर ३० वर्ष की आयु के काल-खण्ड को गुप्त काल बताना।

३. सलीब पर से उतरने के बाद वे कहाँ गए इसे छिपाना।

४. मेरी मॅग्डलीन से विवाह की बात छिपाना तथा मेरी को एक वेश्या के रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करना।

२५ दिस. को मकर संक्रान्ति

क्यों सच को छुपाया गया? क्या रहे

यूरोप का चर्च यह भी नहीं चाहता था कि लोग ईसा के भारत में शिक्षा प्राप्ति के बारे में जानें। यदि आम जनता को पता लग गया कि ईसा ने 'ज्ञान' भारत से प्राप्त किया तो लोगों में ईसा के प्रति श्रद्धा कम हो जायेगी। परिणाम यह होगा कि पादरी लोग तथा चर्च ईसा के नाम का दबदबा यूरोप में नहीं बना पायेंगे।

होंगें तथ्यों को छिपाने के पीछे के कारण? मनुष्य का मस्तिक हमेशा से खोजी रहा है। उसने हमेशा से ही सत्य की खोज करने की कोशिश की है। आइये, समझते हैं तथ्यों को छिपाने के पीछे का सच !

मकर संक्रान्ति इन दिनों १४ जनवरी को आती है। स्वामी विवेकानन्द का जन्म भी १८६३ में मकर संक्रान्ति के दिन हुआ था, किन्तु तब यह १२ जनवरी को थी। पृथ्वी की गति के कारण लगभग ८२ वर्षों के बाद मकर संक्रान्ति एक दिन आगे बढ़ जाती है। **आज से सत्रह सौ साल पहले इसीलिये मकर संक्रान्ति २५ दिसम्बर को आती थी।** इस दिन से दिन बड़े और रात छोटी होने शुरु हो जाते हैं। अतः २५ दिसम्बर यानी मकर संक्रान्ति को यूरोप में बड़ा दिन भी कहा जाता रहा है। इस दिन पूरे यूरोप, अफ्रीका तथा अमरीका में सूर्य की उपासना की जाती थी। एशिया में तो सूर्योपासना तब भी होती थी और आज भी होती है।

जिस समय, वर्ष ३२५ में निकेया में पादरियों की परिषद् हुई, उस समय भी मकर संक्रान्ति का पर्व २५ दिसम्बर को आता था। पादरियों को यह स्वीकार नहीं था कि यूरोप के लोग सूर्य की पूजा करें। सूर्य के स्थान पर ईसा की पूजा हो इसलिये पादरियों की परिषद् ने तय किया कि **२५ दिसम्बर को ईसा के जन्म दिन के रूप में प्रचारित किया जाये।**

१८ साल का अंधेरा

यूरोप का चर्च यह भी नहीं चाहता था कि लोग ईसा के भारत में शिक्षा प्राप्ति के बारे में जानें। इसलिये यह तथ्य भी **निकेया** में जमा हुये पादरियों ने ईसा की जीवनी से हटा दिया। ईसा की जो भी जीवनी अब उपलब्ध है उसमें उनके १२ वर्ष की आयु तक घटना क्रम है और फिर ३० वर्ष के बाद की घटनायें हैं। बीच के १८ वर्षों तक की जानकारी या तो मिलती नहीं है या ऊल-जलूल स्पष्टीकरण मिलते हैं। पादरियों को भय था और आज भी है कि यदि आम जनता को पता लग गया कि ईसा ने 'ज्ञान' भारत से प्राप्त किया तो लोगों में ईसा के प्रति श्रद्धा कम हो जायेगी। परिणाम यह होगा कि पादरी लोग तथा चर्च ईसा के नाम का दबदबा, जैसा कि बाद में बना, यूरोप में नहीं बना पायेंगे। ईसाई साम्राज्यवाद आधी दुनिया में इसीलिये फैल सका, कि पादरियों ने ईसा के जीवन से सम्बन्धित उक्त तथ्य लुप्त कर दिये।

शिष्यों ने उतारा

ईसा मसीह ने मेरी मॅग्डेलीन से विवाह किया और उनके एक कन्या भी थी, यह बात भी उक्त कारणों से छिपाई गई। ईसा मसीह ने काशी, श्रीनगर और ल्हासा (तिब्बत) में बिताये १८ वर्षों में संस्कृत, वेदान्त और बौद्ध-दर्शन की शिक्षा प्राप्त करने के साथ 'योग' में भी सिद्धता प्राप्त कर ली थी। सलीब पर चढ़ाये जाने के बाद योग-बल से उन्होंने शरीर को 'मृत' बना लिया। सलीब से उतारे जाने के बाद उनके शरीर को एक गुम्बद के भीतर रखा गया था। रात में संतरियों को भुलावे में डाल कर ईसा के शिष्य उनके शरीर को एक गुफा में ले गये। वहाँ उनके घावों का उपचार किया गया और योग-बल से वे पुनः जाग्रत हो गये। तीन दिनों बाद गुफा के प्रवेश द्वार पर अन्य शिष्यों को अपनी झलक दिखा कर ईसा रोम से निकल गये और पुनः भारत आ गये तथा श्रीनगर में ही रहने लगे। उनके शिष्य रोम से उनसे मिलने और शिक्षा प्राप्त करने आते रहते थे। अपना अंतिम समय ईसा ने कश्मीर में ही बिताया।

भविष्य पुराण में ईसा

इसके प्रमाण पर्याप्त रूप से उपलब्ध है। जर्मन शोधकर्ता **होल्गर कर्स्टन** ने एक पुस्तक लिखी है - **जीसस लिव्ड इन इण्डिया।** इसमें प्रामाणिक दस्तावेजों के आधार पर सिद्ध किया गया है कि ईसा ने

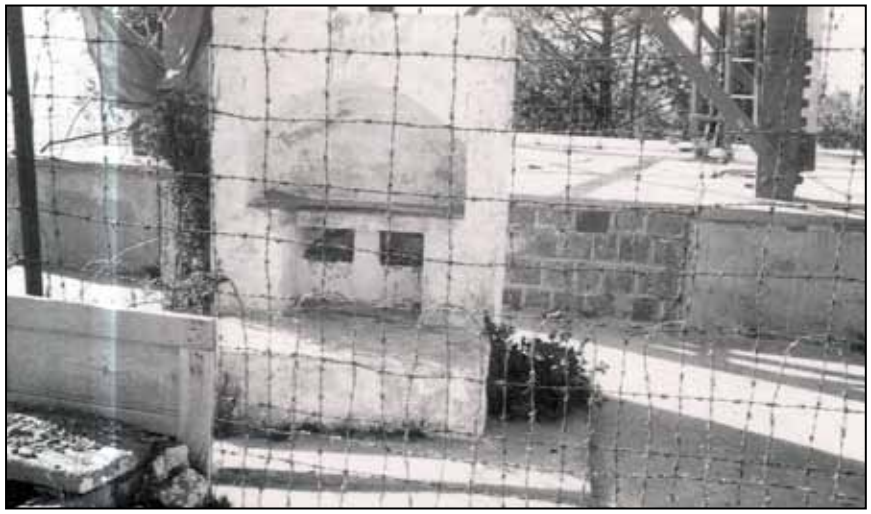

यह ईसा मसीह की माँ मेरी की मजार मानी जाती है जो कि अब पाकिस्तान में है।

भारत में शिक्षा प्राप्त की थी।

भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग पर्व (तृतीय खण्ड) के दूसरे अध्याय में ईसा मसीह का प्रसंग है। इसमें सम्राट शालिवाहन की हिमालय क्षेत्र में ईसा मसीह से भेंट का विवरण दिया गया। ईसा को उक्त प्रसंग में म्लेच्छ-पूज्य अर्थात् म्लेच्छों (ईसाईयों) का देवता बताया गया है। भविष्य पुराण के इसी प्रतिसर्ग वर्ग (तृतीय खण्ड) में आल्हा-ऊदल, राजा भोज आदि का भी संदर्भ है।

श्री शैलेन्द्र नारायण घोषाल शास्त्री ने नर्मदा की पूरी परिक्रमा करने के बाद कई खण्डों में '**तपोभूमि नर्मदा**' नाम की पुस्तक लिखी है। इसके सप्तम-खण्ड में लेखक के एक पुजारी से वार्तालाप का संदर्भ दिया हुआ है (पृष्ठ ३१८-३२३)। पुजारी जी ने कई आश्चर्यजनक रहस्य इस वार्तालाप में खोले हैं। उन्होंने लेखक (घोषाल महोदय) को बताया कि *'ईसा मसीह की लिखी एक पुस्तक आज भी तिब्बत के **हिमिश मठ** में सुरक्षित रखी है।'* पुजारी ने बताया कि ईसा मसीह ने अमरनाथ की गुफा में लम्बे समय तक साधना की थी। बौद्ध एवं ईसाई सम्प्रदाय में विद्यमान विलक्षण समानताओं का वर्णन करते हुए मन्दिर के पुजारी ने बताया कि ईसा के जीवन पर गौतम बुद्ध के प्रभाव के कारण ही उक्त समानताएं हैं।

था हिन्दुओं का शिष्य ईसा

प्रसिद्ध सन्यासी स्वामी रामतीर्थ ने अपनी पुस्तक The Spirital Power that Wins में लिखा है- Crucified Christ threw himself into that state (Samadhi)for three days and like a yogi came to the life again, made his escape and came to live in Kasmir. (ईसा ने सलीब पर तीन दिनों के लिए समाधि लगा ली और एक योगी की तरह पुनः जाग्रत हो गये, वहाँ से बच निकले और रहने के लिये कश्मीर चले आये।)

राष्ट्र-कवि मैथिलीशरण गुप्त का काव्य **भारत-भारती** काफी प्रसिद्ध है। इसमें गुप्त जी ने भी ईसा के भारत में शिक्षा प्राप्त करने का उल्लेख किया है। पुस्तक के अतीत खण्ड का ६८ वाँ छन्द इस प्रकार है-

यूरोप भी जो बन रहा है आज-कल मार्मिकमना,
यह तो कहे उसके खुदा का पुत्र कब धार्मिक बना?
था हिन्दुओं का शिष्य ईसा, यह पता भी है चला
ईसाइयों का धर्म भी है बौद्ध साँचें में ढला।।६८।। ■

- १२२/२३५ अग्रवाल फार्म, मानसरोवर, जयपुर

विज्ञापन

डा. शुचि चौहान
एम.एस.सी.,पी.एच.डी.(वनस्पतिशास्त्र)
उपाध्यक्ष – विश्व संवाद केन्द्र, जयपुर

जम्मू-कश्मीर के तीर्थ-स्थल

वैष्णोदेवी और बाबा अमरनाथ भारत के श्रद्धा-केन्द्र हैं

हिमालय की गोद में बसे कश्मीर को धरती का स्वर्ग कहा गया है। केसर की खुशबूदार क्यारियाँ इसके सौंदर्य को अप्रतिम रूप प्रदान करते हैं। एक समय में इसे अध्यात्म स्थली भी कहा जाता था। भारत में कश्मीर व काशी शिक्षा के लिए विख्यात थे। कल्हण द्वारा रचित राजतरंगिणी के अनुसार, कश्मीर का नाम पहले कश्यपमेरु था। इसे कश्यप ऋषि ने बसाया। बिना किसी पंथीय संघर्ष के यहाँ का सांस्कृतिक स्वरूप उत्तरोत्तर समृद्ध हुआ। परंतु इस्लाम के आगमन के बाद इस पर गहरी चोट हुई। बड़ी संख्या में तीर्थ स्थलों को ध्वस्त करने की कोशिशें की गईं। कश्मीर स्थित हिंदू तीर्थ स्थलों में अधिकांश आज भी या तो खंडित अवस्था में हैं या फिर देख-रेख के अभाव में जीर्ण-शीर्ण हो रहे हैं।

हिमालय की गोद में बसे कश्मीर को धरती का स्वर्ग कहा गया है। बर्फ से ढंके पहाड़, कल-कल बहती नदियाँ, शांत - स्वच्छ झीलें, चिनार के ऊंचे-ऊंचे पेड़, ट्यूलिप के रंग-बिरंगे खेत व बगीचे तथा केसर की खुशबूदार क्यारियाँ इसके सौंदर्य को अप्रतिम रूप प्रदान करते हैं। एक समय में इसे अध्यात्म स्थली भी कहा जाता था। भारत में कश्मीर व काशी शिक्षा के लिए विख्यात थे।

जिहादी कुचेष्टा

कल्हण द्वारा रचित राजतरंगिणी के अनुसार, कश्मीर का नाम पहले कश्यपमेरु था। इसे कश्यप ऋषि ने बसाया। नीलमत पुराण के अनुसार कश्यप मुनि के पुत्र नील यहाँ के पहले राजा बने। तब कश्मीर में केवल वैदिक संस्कृति के अनुयायी ही थे। तीसरी शताब्दी में अशोक के शासन काल में बौद्ध रिलीजन का आगमन हुआ। बाद में जैन, शैव आदि अनेक रिलीजन जन्मे व फले फूले। प्रत्येक काल में शासकों ने अनेक मंदिर, मठ, विहार व स्तूप बनवाए। परंतु इस्लाम के आगमन के बाद इस पर गहरी चोट हुई। बड़ी संख्या में धार्मिक स्थल तोड़े गए, लोगों को आतंकित कर मुसलमान बनाया गया। यही स्थिति ब्रिटिश शासन से लेकर कमोबेश स्वतंत्रता के बाद भी रही। मुसलमानों के कादयान सम्प्रदाय ने कश्मीर का सम्बंध हजरत, मूसा, सुलेमान, ईसा आदि बाइबिल व कुरान में वर्णित मजहबी गुरुओं से जोड़कर कश्मीर को भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं इतिहास से भटकाने का षड़यंत्र आरम्भ कर दिया। कश्मीर का नाम बदलकर 'बाग-ए-सुलेमान' कर दिया। शंकराचार्य पर्वत का नाम 'तख्त-ए-सुलेमान' तो अनंतनाग को 'इस्लामाबाद' प्रचारित किया जाने लगा। और भी ऐसी अनेक कुचेष्टाएं की गई। तीर्थ स्थलों को नष्ट करने की कोशिशें की गई।

कश्मीर स्थित हिंदू तीर्थ स्थलों में अधिकांश आज भी या तो खंडित अवस्था में हैं या फिर देख रेख के अभाव में जीर्ण शीर्ण हो चुके हैं। बाकियों में आतंक के साए में पूजा अर्चना हो रही है। कश्मीर के कुछ प्रसिद्ध तीर्थ-स्थलों के बारे में अमरनाथ सबसे प्रमुख है।

महामाया शक्तिपीठ : देवी के ५१ शक्तिपीठों में से एक पीठ अमरनाथ गुफा में

अमरनाथ धाम की महिमा निराली है

भारत के प्राचीन ग्रंथों और आध्यात्मिक मान्यताओं के अनुसार श्री अमरनाथ धाम की पवित्र गुफा सम्पूर्ण सृष्टि के आद्य और आराध्य देव भगवान शिव शंकर का निवास है। इस पवित्र गुफा में प्राकृतिक रूप से बनने वाले बर्फ के शिवलिंग के रूप में स्वयं भगवान शंकर विराजमान होते हैं, अत: यह अमरनाथ धाम सृष्टि के आदिकाल से ही सम्पूर्ण मानव समाज का आस्था-स्थल रहा है।

श्रीनगर के पूर्व में लगभग १३५ कि.मी. की दूरी पर स्थित अमरनाथ धाम की पवित्र गुफा लगभग १३६०९ हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है। ५० फुट लम्बी और २५ फुट चौड़ी इस गुफा और तीर्थयात्रा का वर्णन ५ हजार वर्ष पुराने नीलमत पुराण में भी मिलता है। विश्व प्रसिद्ध कश्मीरी इतिहासकार कल्हण ने १२वीं सदी में अपने ग्रंथ राजतरंगिणी में इसका वर्णन किया है। आइना-ए-अकबरी में अबुल फजल ने तथा प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक वाल्टयर लॉरेंस ने भी अपने ग्रंथ 'द वैली ऑफ कश्मीर' में इसकी चर्चा की है।

इस स्थान की महानता का पता इसी बात से चलता है कि सुदूर केरल निवासी आदि शंकराचार्य ने यहां पहुंच कर शिवलिंग की पूजा की थी। उनकी स्मृति में श्रीनगर स्थित शंकराचार्य पर्वत पर शंकराचार्य मंदिर भी है। दुर्भाग्य से कट्टरपंथियों ने इस शंकराचार्य पर्वत का नाम 'तख्त-ए-सुलेमान हिल' कर दिया है। स्वामी रामतीर्थ, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द अमरनाथ धाम में पूजा करने आ चुके हैं। भगिनी निवेदिता जो सन् १८९८ में स्वामी विवेकानन्द के साथ यहां दर्शनार्थ आईं थीं, उन्होंने भी अपने एक संस्मरण में इस स्थान की पवित्रता, तेजस्वी वातावरण और शांत वादियों का वर्णन किया है।

इस स्थान के अस्तित्व में आने के बारे में यह मान्यता है कि यहां पर भगवान शिव ने अमरनाथ धाम की कथा माता पार्वती को सुनाई थी, इसका रोचक वर्णन मिलता है। देवऋषि नारद ने माँ पार्वती से कहा कि शिव से पूछो कि उनके गले में मुंडमाला का रहस्य क्या है? तब माँ पार्वती के आग्रह पर भोले बाबा ने बताया कि इस माला में पार्वती जी के अलग-अलग जन्मों के मुंड हैं।

तब माँ पार्वती को अहसास हुआ कि वह भी जन्म-मृत्यु के बंधन में है। माँ द्वारा तब अमृत्व के लिए बार-बार आग्रह करने पर भोले शंकर ने अमरनाथ धाम की कथा सुनाना मान लिया।

ऐसी भी मान्यता है कि भगवान शंकर द्वारा माता पार्वती को बताया जा रहा सृष्टि के निर्माण और विनाश का रहस्य कबूतरों के एक जोड़े ने भी सुन लिया था। यह दोनों कबूतर भी अमर हो गए। कहते हैं कि यह सफेद कबूतरों का जोड़ा आज भी बर्फानी शिवलिंग के दर्शन करने प्रत्येक वर्ष आता है। कई यात्रियों ने इन्हें देखा भी है।

स्थित है। मान्यता है कि यहाँ देवी की गर्दन गिरी थी। गुफा में कुछ दूरी पर शिवलिंग के साथ ही हिमनिर्मित एक पार्वतीपीठ भी रहता है। यही पार्वतीपीठ महामाया शक्तिपीठ के रूप में मान्य है।

माँ वैष्णो देवी : यह मंदिर कटरा से १४ किमी दूर, समुद्र तल से ५२०० फुट की ऊंचाई पर त्रिकुटा पहाड़ी पर स्थित है। यहाँ वर्ष भर श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है।

इस मंदिर निर्माण लगभग सात सौ साल पहले माँ वैष्णवी के भक्त पंडित श्रीधर द्वारा करवाया गया था। वे नि:संतान होने से दु:खी रहते थे। एक बार उन्होंने नवरात्रि पूजन के लिए कुँवारी कन्याओं को बुलाया। माँ वैष्णवी कन्या वेश में उन्हीं के बीच आ बैठीं। पूजन के बाद सभी कन्याएं तो चली गई पर माँ वैष्णो देवी वहीं रहीं और श्रीधर से बोलीं- 'सबको अपने घर भंडारे का निमंत्रण दे आओ।' श्रीधर ने उस दिव्य कन्या की बात मान आस-पास के गाँवों में भंडारे का संदेश पहुँचा दिया।

वहाँ से लौटकर आते समय गुरु गोरखनाथ व उनके शिष्य बाबा भैरवनाथ के साथ उनके दूसरे शिष्यों को भी भोजन का निमंत्रण दिया। श्रीधर के घर गांववासी भोजन के लिए एकत्रित हुए। तब कन्या रूपी माँ वैष्णो देवी ने सभी को भोजन परोसना शुरू किया। भोजन परोसते हुए जब वह कन्या भैरवनाथ के पास गई। तब उसने कहा कि मैं तो खीर, पूड़ी की जगह मांस भक्षण और मदिरापान करुंगा। तब कन्या रूपी माँ ने उसे समझाया कि ब्राह्मण के घर के भोजन में मांसाहार नहीं किया जाता। किंतु भैरवनाथ जान बूझकर अपनी बात पर अड़ा रहा।

जब भैरवनाथ ने उस कन्या को पकड़ना चाहा तो उसके कपट को जान माँ त्रिकुटा पर्वत की ओर चलीं। भैरवनाथ भी उनके पीछे गया। माता ने वहाँ से आने के बाद एक गुफा में प्रवेश कर नौ माह तक तपस्या की। इस बीच भैरवनाथ भी वहां आ गया। तब एक साधु ने भैरवनाथ से कहा कि तू जिसे एक साधारण कन्या समझ रहा है,

वह आदिशक्ति जगदम्बा हैं। इसलिए उस महाशक्ति का पीछा छोड़ दे। भैरवनाथ ने साधु की बात नहीं मानी। तब माता गुफा की दूसरी ओर से मार्ग बनाकर बाहर निकल गईं । यह गुफा आज भी अर्धकुमारी या आदिकुमारी के नाम से प्रसिद्ध है।

माता ने भैरवनाथ को चेताते हुये वापस जाने को कहा। नहीं मानने पर माता वैष्णवी ने महाकाली के रूप में आकर भैरवनाथ का संहार कर साथ ही क्षमादान मांगने पर मोक्ष प्राप्ति का वरदान भी दिया। भैरवनाथ का सिर कटकर भवन से आठ किमी. दूर त्रिकुटा पर्वत की घाटी में गिरा। जिसे आज भैरव घाटी के नाम से जाना जाता है तथा वह स्थान जहाँ सिर गिरा वहाँ भैरवनाथ का मंदिर है। जिस स्थान पर माँ वैष्णो देवी ने हठी भैरवनाथ का वध किया, वह स्थान पवित्र गुफा अथवा भवन के नाम से प्रसिद्ध है। इसी स्थान पर माँ काली, माँ सरस्वती तथा माँ लक्ष्मी पिंडी के रूप में गुफा में विराजमान हैं। इन तीनों के सम्मिलत रूप को ही माँ वैष्णो देवी का रूप कहा जाता है।

शीतलेश्वर : श्रीनगर के हब्बा कदल क्षेत्र में स्थित यह मंदिर दो हजार साल पुराना है। १९९० में कश्मीरी पंडितों के निष्कासन व लगातार हिंसा के चलते सूना पड़ा यह तीर्थ स्थल जर्जर हालत में पहुंच गया था। कुछ वर्ष पहले कश्मीरी पंडितों ने इसकी देखभाल शुरू की है। अब यहाँ भक्तों का आना-जाना है।

शंकराचार्य पहाड़ी : डल झील के पास शंकराचार्य पहाड़ी पर स्थित शिव मंदिर अत्यंत सुंदर है। यह कश्मीर के प्राचीनतम मंदिरों में से एक है। इसे ज्येष्ठेश्वर मंदिर या आदि गुरू शंकराचार्य के नाम पर शंकराचार्य मंदिर भी कहा जाता है। इस मंदिर का निर्माण राजा संदीपन ने करवाया था। उस समय यहां सोने व चांदी से बनी तीन सौ प्रतिमाएं थीं। गोपादित्य ने इस मंदिर का पुनर्निर्माण करवाया। राजा ललितादित्य द्वितीय ने भी इसके रखरखाव की व्यवस्था की।

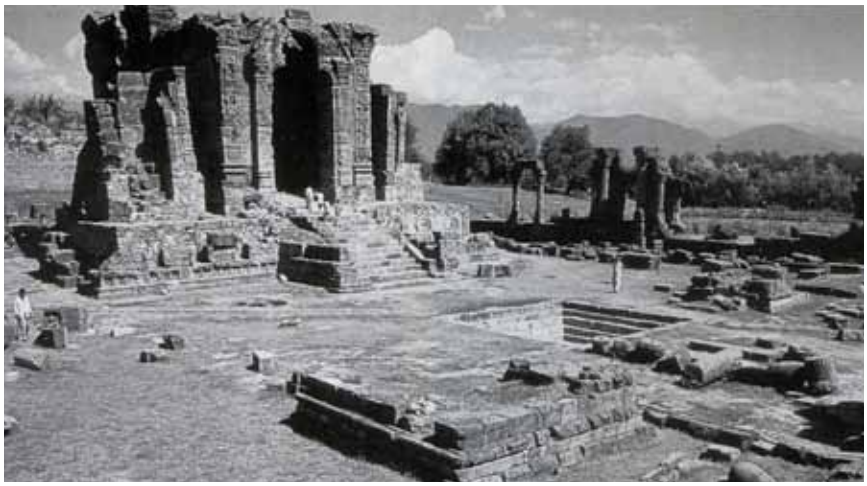

श्रीनगर के पास स्थित मार्तण्ड मंदिर

त्रिपुरसुंदरी : घाटी के कुलगाम जिले के देवसर क्षेत्र में स्थित यह मंदिर हिन्दू समाज की आस्था का प्राचीन केंद्र है। मुसलमानों द्वारा तोड़ दिए जाने के बाद से खंडहर हो चुका यह पूजा स्थल अपने पुनरुद्धार की बाट जोह रहा है।

क्षीर भवानी : कश्मीर के गंदेरबल जिले के तुल्ला-मुल्ला गांव में स्थित क्षीर भवानी मंदिर कश्मीरी पंडितों की आराध्या देवी का मंदिर है। इसका निर्माण महाराजा प्रताप सिंह ने करवाया था। पहले यहाँ प्रति वर्ष क्षीर भवानी महोत्सव मनाया जाता था।

> अमरनाथ गुफा की खोज को लेकर भी कई वर्षों से यह भ्रांति फैलानी शुरू की गई कि इसकी खोज एक मुस्लिम गडरिए ने की थी। जबकि किसी पुस्तक या ग्रंथ में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता। पुरातत्व विभाग इस गुफा को ५००० साल पुराना बताता है।

लेकिन आतंकवाद के चलते यह बंद हो गया। मान्यता है कि भगवान श्रीराम ने अपने निर्वासन काल में इस स्थान को अपनी पूजा स्थली बनाया था। यहाँ केवल खीर व दूध ही चढ़ाया जाता है।

ज्वालादेवी : पुलवामा से लगभग १७ किलोमीटर दूर खेव में माता ज्वालादेवी का मंदिर है। यह एक शक्तिपीठ है। कुछ वर्ष पहले आतंकियों ने यहाँ आग लगा दी थी। तब से यह जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है।

प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल मत्तन : भारत में दो सूर्य मंदिर हैं, एक उड़ीसा के कोणार्क में व दूसरा अनंतनाग के मार्तण्ड में मट्टन (मत्तन) नामक पठार के शिखर पर। इस मंदिर का निर्माण लगभग १४०० वर्ष पूर्व सूर्य वंश के राजा ललितादित्य मुक्तापीड ने करवाया था। यह मंदिर अपनी स्थापत्य कला के लिये प्रसिद्ध है। इसमें नियमित अंतराल पर ८४ स्तंभ थे जो आज टूट चुके हैं। मंदिर को बनाने के लिए चूने के पत्थर की चौकोर ईंटों का उपयोग किया गया था। इस ऐतिहासिक और विशालकाय सूर्य मंदिर को मुस्लिम शासक सिकंदर बुतशिकन ने १३९३ में तुड़वा दिया था। उसने पंडितों को मारकर व मुसलमान बना कर करके ३ खिर्बार (७मन) जनेऊ इकट्ठे किए थे।

शिव खोड़ी धाम : शिव खोड़ी शिवालिक पर्वत शृंखला में एक प्राकृतिक

गुफा है, जिसमें प्रकृति निर्मित शिवलिंग विद्यमान है। मान्यता है कि स्यालकोट के राजा सालवाहन ने शिव खोड़ी में शिवलिंग के दर्शन किए थे और इस क्षेत्र में कई मंदिरों का निर्माण करवाया था जो बाद में सालवाहन मंदिर के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह स्थान रियासी-राजौरी सड़क मार्ग पर है, जो पौनी गांव से दस मील की दूरी पर स्थित है। महाशिवरात्रि पर यहाँ बड़ा मेला लगता है। इस क्षेत्र में प्राचीन मंदिरों के कई अवशेष आज भी बिखरे पड़े हैं। शिव खोड़ी शिवभक्तों के लिए एक महान तीर्थ स्थल है।

रघुनाथ मंदिर : यह मंदिर जम्मू शहर में स्थित है। इस भव्य व आकर्षक मंदिर का निर्माण कार्य राजा गुलाब सिंह ने १८३५ में आरंभ करवाया था। बाद में उनके पुत्र महाराजा रणवीर सिंह ने १८६० में इसे पूरा करवाया। मंदिर की आंतरिक सज्जा में सोने के पत्तरों का प्रयोग किया है। यह अपनी वास्तुकला व भव्यता के लिए पूरी दुनिया में जाना जाता है। वर्ष २००२ में इस मंदिर पर एक बड़ा आतंकवादी हमला हुआ, जिसके बाद इस मंदिर को भी बंद कर दिया गया था किन्तु श्रद्धालुओं के दबाव के बाद इसे २०१४ में फिर से खोला गया। ■ *– विद्याधर नगर, जयपुर*

डीडवाना जिला प्रचारक

महावीर जी का निधन

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, राजस्थान क्षेत्र के डीडवाना जिले के जिला प्रचारक श्री महावीर जी का गत ८ अक्तूबर को एक सड़क दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया। यह दुर्घटना उस समय हुई जब वे संघ के एक कार्यक्रम में भाग लेने लाडनूं जा रहे थे। वे मात्र २५ वर्ष के थे। श्री महावीर जी ने अल्प जीवन काल में संघ कार्य को आगे बढ़ाने में अपने आपको पूर्णरूप से समर्पित कर रखा था। आपका जन्म आहोर तहसील(जिला जालोर) के थावला गाँव में हुआ था।

पाथेय कण परिवार आपको हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

विज्ञापन

विज्ञापन

विजय दशमी उत्सव पर सरसंघचालक भागवत जी ने कहा

सबसे आत्मीयता रखने वाला ही हिन्दू है

'विश्व में पंथ कई हैं किन्तु धर्म एक ही है- मानवधर्म । कुछ लोग उसे हिन्दू धर्म कहते हैं तो क्या करें? वास्तविकता भी यही है। जल-जंगल-जानवर और सबके प्रति आदर रखने वाला व्यक्ति, वो कोई भी हो, विश्व के किसी भी कोने में रहने वाला हो, उसका खान-पान, रीति-रिवाज कुछ भी हो, उसकी कोई भी पूजा पद्धति हो या न हो-वह हिन्दू है। यही विश्व भर में संकल्पना रही है। हिन्दू एक ही शब्द ऐसा है, जो इस पूरे कंटेंट को बताता है। वह किसी कर्मकांड या ग्रन्थ को नहीं बताता। आप इसे भारतीय कहें या इंडिक विचार, हमारा विरोध नहीं है' इन शब्दों में सरसंघचालक डॉ. मोहन भागवत ने नागपुर में हिन्दू शब्द की व्यापकता से परिचय कराया। ८ अक्तूबर की सुबह वे नागपुर के रेशिमबाग प्रांगण में संघ के विजयादशमी उत्सव में बोल रहे थे। इस अवसर पर प्रमुख अतिथि के रूप में प्रसिद्ध उद्यमी, समाजसेवी और हिंदुस्तान कम्प्यूटर्स लिमिटेड (एच सी एल) के संस्थापक तथा अध्यक्ष श्री शिव नाडर उपस्थित थे।

अपने सम्बोधन में सरसंघचालक जी ने कहा कि, भारत देश का व्यक्ति जब विश्व में जाता है तो सबसे आत्मीयता रखता है। वो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' मानता है। हिन्दू कौन है? विश्व में एक सत्य के अनेक रास्ते हैं, ऐसा मानने वाला ही हिन्दू है। किसी को बदलने या मिटाने की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर के रूप एक या अनेक ये व्यक्ति पर निर्भर करता है। सबकी बात सही है। मेरी ही सही है- ऐसा मानना सही नहीं है। लेकिन संघ के बारे में वृथा भ्रांतियाँ फैलाई जाती हैं। किसी ने कह दिया है कि, गुरूजी और सावरकर हिटलर को आदर्श मानते थे। अब इसका प्रमाण क्या है, ऐसा पूछने पर वो कहते हैं कि, 'हमें प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है।' यह अहंकार है। हिन्दू की बात करना याने मुसलमान या क्रिश्चियन का विरोध करना नहीं है।

केंद्र सरकार द्वारा अनुच्छेद ३७० को अप्रभावी बनाने के काम का उल्लेख करते हुए उन्होंने देश के प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, शासक दल और समर्थन करने वाले अन्य दलों का अभिनन्दन किया। उन्होंने कश्मीरी पंडितों के पुनर्वसन को लेकर यह भी कहा कि, जो न्याय कार्य धारा ३७० के प्रभाव के कारण नहीं हो सके थे उनके संपन्न होने पर तथा धारा ३७० के प्रभाव से जो अन्याय हो रहा था उनकी समाप्ति से उक्त प्रावधान को अप्रभावी बनाने का कार्य पूर्ण होगा। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि, घाटी के बंधुओं के मन में जो उनकी जमीनों और नौकरियों को लेकर गलत डर भर गया है वह दूर होकर वो शेष भारत-जनों के साथ एक मन से देश के विकास में अपनी जिम्मेदारी भी संभालेंगे।

'चंद्रयान' को अपेक्षित पूर्ण सफलता ना मिली किन्तु, प्रथम प्रयास में इतना कुछ कर पाना इसे उन्होंने सारी दुनिया को अब तक साध्य न हुयी बात बताया। स्थल तथा जल सीमाओं पर सुरक्षा-सतर्कता को पहले से बेहतर बताते हुए उन्होंने स्थल सीमा पर रक्षक और चौकियों की संख्या बढ़ाने और जल सीमा पर विशेषतः द्वीपों वाले टापुओं की निगरानी बढ़ाने पर बल दिया।

भागवत जी ने देश के भीतर आपस में भेद या वैमनस्य बढ़ाने की प्रवृत्तियों के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता भी प्रकट की। समाज के भीतर सामूहिक हिंसा की घटनाओं को जानबूझकर करवाया जाना और विकृत रूप से प्रकाशित किये जाने का उल्लेख करते हुए उन्होंने साफ कहा कि, ऐसी घटनाएँ एक तरफा नहीं हैं और हिंसा की प्रवृत्ति परस्पर सम्बंधों पर बुरा असर डालती है। ये घटनाएं ना तो हमारे देश की परंपरा है और ना ही हमारे संविधान में बैठती हैं। ऐसी जो परंपरा भारत की नहीं है उसके लिए 'लिंचिंग' जैसे शब्द प्रयोग कर देश को, हिन्दू समाज को बदनाम करने और तथाकथित अल्पसंख्यक समाज के मन में भय पैदा करने का प्रयास होना एक षड्यंत्र है।

स्वतंत्रता के इतने दशकों बाद भी देश में स्वत्व का भाव कम होने के मूल में गुलाम बनाने वाली शिक्षा, जो अब तक जारी है को बदलने तथा उसकी रचना भारतीय दृष्टि से करने की आवश्यकता उन्होंने प्रतिपादित की। परिवारों में होने वाले संस्कारों के क्षरण, सामाजिक जीवन में मूल्य-निष्ठा विहरित आचरण तथा नई पीढ़ी में बढ़ते हुए नशीले पदार्थों के व्यसन को बड़ी समस्याएँ बताते हुए भागवत जी ने संघ के स्वयंसेवकों तथा अभिभावकों को सजग व सक्रिय होने का आह्वान किया।

मुख्य अतिथि श्री शिव नाडर ने राष्ट्र निर्माण की दिशा में उपस्थित कुपोषण, अशिक्षा, अस्वच्छता, बिजली का अभाव तथा अन्य चुनौतियों का सामना करने के लिये किये गए प्रयासों की जानकारी दी। चान्द्रायण मिशन की सफलता की प्रशंसा करते हुए उन्होंने एच सी एल के आरम्भ के दिनों की चुनौतियों का भी उल्लेख किया। अपने भारत देश की उपलब्धियों पर तथा क्षमताओं पर अभिमान की अनुभूति सदैव रखें ऐसा सन्देश भी श्री शिव नाडर ने अपने भाषण मे दिया। ■

विज्ञापन

विज्ञापन

विज्ञापन

विज्ञापन

पाक्षिक
पाथेय कण
१६ अक्तूबर, २०१६

आर.एन.आई.पंजीयन क्र. ४८७६०/८७ अग्रिम शुल्क बिना प्रेषण की अनुमति लाइसेंस संख्या
डाक पंजीयन संख्या JAIPUR CITY /२०२/२०१८-२० JAIPUR CITY/ WPP - ०१/२०१८-२०

सबका साथ-सबका विकास-सबका विश्वास

स्वच्छता ही सेवा

स्वच्छ प्रदेश बनाना है
हर घर से प्लास्टिक हटाना है

15 अगस्त, 2018 से उत्तर प्रदेश के नगर पंचायत, नगर पालिका, नगर निगम या राज्य की औद्योगिक नगरी के आने वाले क्षेत्रों में एक बार उपयोग के पश्चात् निस्तारण योग्य (डिस्पोजबल) कपों, गिलासों, प्लेटों, चम्मचों, टंबलरों के उपयोग, विनिर्माण, विक्रय, वितरण, भण्डारण, परिवहन, आयात या निर्यात को प्रतिषिद्ध किया गया है।

2 अक्टूबर, 2018 से उत्तर प्रदेश के नगर पंचायत, नगर पालिका, नगर निगम या राज्य की औद्योगिक नगरी के आने वाले क्षेत्रों में समस्त प्रकार के निस्तारण योग्य प्लास्टिक कैरी बैगों के उपयोग, विनिर्माण, विक्रय , वितरण, भण्डारण, परिवहन, आयात या निर्यात को प्रतिषिद्ध किया गया है।

उक्त प्रतिबंध का उल्लंघन दण्डनीय अपराध है

प्रतिषिद्ध श्रेणी के निस्तारण योग्य पॉलिथीन कैरी बैगों, प्लास्टिक और थर्मोकोल वस्तुओं की मात्रा	धनराशि (रुपयों में)
100 ग्राम तक	1,000
101 ग्राम-500 ग्राम	2,000
501 ग्राम-1 किलोग्राम	5,000
1 किलोग्राम-5 किलोग्राम	10,000
5 किलोग्राम से अधिक	25,000

किसी संस्था/ वाणिज्यिक संस्था /वाणिज्यिक प्रतिष्ठान/शैक्षिक संस्थाओं/ कार्यालयों/ होटलों/ दुकानों/रेस्तराओं/मिष्ठान दुकानों/ ढाबों/ औद्योगिक प्रतिष्ठानों/ भोजन कक्षों आदि द्वारा परिसर के अंतर्गत और सड़कों, मार्गों, नालों, नदियों, झीलों, तालाबों, वन क्षेत्रों, सार्वजनिक पार्कों, समस्त सार्वजनिक स्थलों आदि पर प्लास्टिक अपशिष्ट का फेंका जाना। रु० 25,000

व्यक्तियों द्वारा किन्हीं निजी या वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों यथा शैक्षिक संस्थाओं/ कार्यालयों /होटलों/ दुकानों/ रेस्तराओं/मिष्ठान दुकानों/ढाबों/ औद्योगिक प्रतिष्ठानों/भोजन कक्षों आदि में और सड़कों, मार्गों, नदियों, झीलों, सार्वजनिक पार्कों, वन क्षेत्रों और समस्त सार्वजनिक स्थानों आदि पर प्लास्टिक अपशिष्ट का फेंका जाना। रु० 1,000

जुर्माने के साथ-साथ सजा का भी प्रावधान है

- जो कोई प्रतिबंधित सामग्री [प्लास्टिक कैरी बैग/प्लास्टिक या थर्मोकोल से निर्मित एक बार उपयोग पश्चात् निस्तारण योग्य (डिस्पोजबल) कपों, गिलासों, प्लेटों, चम्मचों, टंबलरों] का उपयोग करता है या उपयोग करने हेतु दुष्प्रेरित करता है, प्रथम दोष सिद्धि की स्थिति में ऐसी अवधि के कारावास के साथ, जो एक माह तक हो सकती है या ऐसे जुर्माने के साथ जो एक हजार रुपये से कम नहीं होगा और दस हजार रुपये तक हो सकता है और द्वितीय या अनुवर्ती दोष सिद्धि की स्थिति में ऐसी अवधि के कारावास के साथ जो छः मास तक हो सकती है या ऐसे जुर्माने के साथ जो पांच हजार रुपये से कम नहीं होगा और जो बीस हजार रुपये तक हो सकता है, दण्डित किया जायेगा।
- जो कोई प्रतिबंधित सामग्री [प्लास्टिक कैरी बैग/प्लास्टिक या थर्मोकोल से निर्मित एक बार उपयोग पश्चात् निस्तारण योग्य (डिस्पोजबल) कपों, गिलासों, प्लेटों, चम्मचों, टंबलरों] का विनिर्माण, विक्रय, वितरण, भण्डारण, परिवहन, आयात या निर्यात करेगा अथवा विनिर्माण, विक्रय, वितरण, भण्डारण, परिवहन, आयात या निर्यात के लिए दुष्प्रेरित करेगा, प्रथम दोष सिद्धि की स्थिति में ऐसी अवधि के कारावास के साथ, जो छः माह तक हो सकती है या ऐसे जुर्माने के साथ जो दस हजार रुपये से कम नहीं होगा और जो पचास हजार रुपये तक हो सकता है, और द्वितीय या अनुवर्ती दोष सिद्धि की स्थिति में ऐसी अवधि के कारावास के साथ जो एक वर्ष तक हो सकती है या ऐसे जुर्माने के साथ जो बीस हजार रुपये से कम नहीं होगा और जो एक लाख रुपये तक हो सकता है, दण्डित किया जायेगा।

हम सबने यह ठाना है,
यू० पी० स्वच्छ बनाना है

यही है हमारा संकल्प इस्तेमाल करेंगे
पॉलिथीन का विकल्प

उक्त प्रतिबंध को प्रभावी करने हेतु निम्न अधिकारी अपने क्षेत्राधिकार में नामित किये गये हैं :-

- समस्त जिला मजिस्ट्रेट, अपर जिला मजिस्ट्रेट और परगना मजिस्ट्रेट, उत्तर प्रदेश।
- उत्तर प्रदेश के नगरीय स्थानीय निकायों के समस्त नगर आयुक्त, अपर नगर आयुक्त, कार्यपालक अधिकारी, क्षेत्रीय अधिकारी, सफाई निरीक्षक (क्रमशः नगर आयुक्त और अधिशासी अधिकारियों) की अनुज्ञा से।
- सदस्य सचिव, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, समस्त पर्यावरण अभियन्ता, वैज्ञानिक अधिकारी, सहायक पर्यावरण अभियन्ता, सहायक वैज्ञानिक अधिकारी, अवर अभियंता और वैज्ञानिक सहायक, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, उत्तर प्रदेश।
- निदेशक पर्यावरण, उप निदेशक पर्यावरण और सहायक निदेशक पर्यावरण, उत्तर प्रदेश।
- समस्त मुख्य चिकित्सा अधिकारी और चिकित्सा अधिकारी, उत्तर प्रदेश
- समस्त उप/सहायक श्रम एवं सेवायोजन अधिकारी, उत्तर प्रदेश
- समस्त प्रभागीय वन अधिकारी, उप प्रभागीय अधिकारी और क्षेत्रीय अधिकारी, उत्तर प्रदेश।
- समस्त तहसीलदार और नायब तहसीलदार, उत्तर प्रदेश।
- समस्त पर्यटन अधिकारी और सहायक पर्यटन अधिकारी, उत्तर प्रदेश।
- समस्त जिला पूर्ति अधिकारी और खाद्य निरीक्षक, उत्तर प्रदेश।
- समस्त खाद्य एवं सुरक्षा निरीक्षक, उत्तर प्रदेश।
- उत्तर प्रदेश के औद्योगिक विकास प्राधिकरणों के सहायक प्रबंधक, अवर अभियन्ता और उससे ऊपर के अधिकारियों की श्रेणी के समस्त अधिकारी।

स्वच्छ भारत मिशन (नगरीय), नगर विकास विभाग, उत्तर प्रदेश

टोल फ्री : 1800 1800 101

स्वत्वाधिकारी पाथेय कण संस्थान के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक माणक चन्द
द्वारा कुमार एण्ड कम्पनी,ए-१०,२२ गोदाम औद्योगिक क्षेत्र, जयपुर से मुद्रित
प्रकाशकीय कार्यालय : पाथेय भवन, ४, मालवीय संस्थानिक क्षेत्र, मालवीय नगर, जयपुर-३०२०१७
सम्पादक : मेघराज खत्री
प्रेषण दिनांक १६,१७,१८,१६ व २०अक्तूबर २०१६ आर.एम.एस.(पी.एस.ओ.) जयपुर

प्रतिष्ठा में,